CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वाराणसीस्थ आनन्दभाष्यकार जगद्गुरु श्री रामानन्दाचार्यपीठाधीश्वर

जगद्गुरु श्री रामानन्दाचार्य - रामपट्टाभिषिक्त

योगीन्द्र प्रवर्तित विश्राम द्वारकास्थ श्री सीतमठ संचालित

ज.गु.श्री रामानन्दाचार्य-पीठ

सचित्र धार्मिक मासिक

कार्यालय — आचार्यपीठ श्री कोशलेन्द्रमठ सरखेजरोड
पो० पालडी अहमदाबाद ३८०००७

संरक्षक — शेठ श्री अमरशी कुरजी मजिठिया

सम्पादक — जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्यजी

सहसम्पादक — पं. श्री शरचन्द्र शास्त्री

व्यवस्थापक — म. म. स्वामी रामावतारदासजी (रत्न)

प्रकाशक — स्वामी सीतारामाचार्य

क्रमागत समीक्षा

तथा

जिज्ञासादि

वर्ष १४ विक्रमाब्द २०४९ अङ्क १०

श्रीरामानन्दाब्द ६९२ दिसम्बर १९९२

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

श्रीरामानन्दीय बांधवो के प्रति

सम्प्रदायनिष्ठ श्रीरामानन्दीय प्रिय बान्धवो ! आप (सर्वो ने इसी पत्रिका के पृ० १६६–६८ में प्रकाशित गलता गादी सम्बन्धीत चर्चा का गहनतया अध्ययन किया होगा उससे यों प्रतित होता है कि श्रीरामानन्दीय विरक्त समाज का अस्तित्व को धूलीसात करने का गहरा षडयन्त्र उपस्थापित किया जा रहा है । अपने गौरवमय अस्तित्व को अक्षुण्य बनाये रखने हेतु जागृत हो जांय एवं इस कुचक्र को किसी भी किमत पर निष्फल करने के लिये जुट जांयं तथा राजस्थान सरकार से सम्पर्क कर ऐसी घटना न होने देने के लिये अनुरोध करें । कुछ दिन पूर्व स्मारिका या पुस्तक के द्वारा श्रीरामानन्द सम्प्रदाय के मूलाधारपर कुठाराघातका निष्फल प्रयास किया गया । जिसका प्रतिकार जगद्गुरुश्रीरामानन्दाचार्य पीठ पत्रिकाने डटकर किया एवं कर रहा है । यह गलतागादी सम्बन्धि नवीन उपस्थापित प्रकरण पूर्ववर्तीयों का पृष्ठपोषक नहीं है ? यदि इसी प्रकार अपनी मूल गादी या द्वारागादी के ऊपर ही अतथ्य पूर्ण अनैतिहासिक असम्बद्ध आक्षेप किया जाया करे और उनका परिमार्जन न किया जाय तो अपना अस्तित्व कैसा ?

अतः श्रीरामानन्द सम्प्रदायाभिमानी अनि, अखाडे, खालसे, आचार्यपीठाधीश श्रीमहन्त, विद्वान् विचारक सन्त-महन्त नागा-अतीत अभ्यागत प्रभृति सर्वोसे यह आग्रह है कि आप जगजांय अपनी अनादिकालसे सम्मानपूर्वक प्राप्त सन्निष्ठा एवं सम्मान की रक्षाकरें ।

इन प्रकृत विषयों के ऊपर असावधानी या कुछ समयका विलम्ब भी श्रीरामानन्द सम्प्रदाय या आप सर्वोके अस्तित्वपर प्रश्न चिन्ह लगा सकता है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

और हम ब्रह्म के एक देश को जानकर सामान्य लक्षण प्रत्यक्ष के द्वारा अखिल ब्रह्म को जान जाते हैं। इस प्रकार श्रुति और न्याय शास्त्रानुसार ब्रह्म निःशेष वचनीय है। गणित शास्त्रानुसार भी अनन्त 'इनफीनीटिव' का विशेष गणित विज्ञान है। अनन्त में जोड या घटाव करने से कोई अन्तर नहीं पडता। यदि अनन्त में से अनन्त को भी निकाल दें तो भी वह सदा अनन्त ही रहता है। यही बात श्रुति भी कहती है– पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्ण मुदच्यते। पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्ण-मेवावशिष्यते ॥ [पूर्ण है वह पूर्ण है यह पूर्ण से निष्पन्न होता पूर्ण है। पूर्ण में से पूर्ण को यदि निकालें, शेष तब भी पूर्ण ही रहता सदा ॥] पूर्णात्पूर्ण मुदचति पूर्ण पूर्णेण सिच्यते। अथर्व १०।८।२९।' इस प्रकार ब्रह्म सदा अनन्त (पूर्ण या निशेष) है और इसका कथन सदा निःशेष कथन है, अपूर्ण कथन नहीं। अनन्त ब्रह्म कहना भी निःशेष है और केवल ब्रह्म कहना भी। सभी स्थितियों में उसे पूर्ण ही होने के कारण किसी भी शब्द में उसको कहना पूर्ण अर्थात् निःशेष ही है। तत्, ता, स आदि सर्वनामों (सर्वेषां नाम सर्वनाम) द्वारा ब्रह्म ब्रह्म का कथन–"तदेवाग्निस्तदादित्यस्तद्वायुस्तदु चन्द्रमाः। तदेव शुक्रं तद्ब्रह्म ता आपः स प्रजापतिः ॥ शु.य. ३२।१॥" निःशेष कथन है, एवं सर्व शब्दों के द्वारा निरूपित–"ईशा वास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्। शु.य.४०।१॥" भी निशेष कथन है। सर्व और निःशेष शब्द पर्याय हैं–"अथ समं सर्वम्। विश्वमशेषं कृत्स्नं समस्त निखिलाखिलानि निः शेषम्। समग्रं सकलं पूर्णमखण्डमखण्डं स्यादनून के ॥ अ.को. ३।१।६४-६५॥' इस प्रकार सर्व, पूर्ण, विश्व आदि निःशेष के पर्याय द्वारा प्रति-वाक्य निःशेष के पर्याय द्वारा प्रतिपादित वाक्य निःशेष कथन है, एवं ब्रह्म के सम्बन्ध में इस सम, सर्व, विश्व, अशेष, निः शेष, सकल, समग्र, पूर्ण आदि पदों का व्यवहार अबाध होनेसे ब्रह्म निःशेष वचनीय है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

॥ अथ और इति ॥

श्रीरामानन्द सिद्धांत चन्द्रिका का अथ(आरम्भ) श्रीरामानन्दाचार्यजी के चित्र से होना है और इति (समापन या अन्त) आचार्य चरणानां विरुदावली शीर्षक विरुदावली में होता है।

इन अथ इति में ग्रन्थकार का पाखण्ड छुपाया गया किन्तु प्रकट है। ऐसे तो यह चित्र ज.गु. श्रीरामानन्दाचार्य का कह कर छापा गया है, परन्तु वस्तुतः यह चित्र ग्रन्थकार श्रीरामभद्राचार्यजी का किशोरावस्था का ही सुधरा चित्र है। जो इसीग्रन्थ में छपे श्रीरामभद्राचार्यजी के चित्र के साथ तुलना कर देखने से प्रत्यक्ष सिद्ध है। इस प्रकार इन्होंने अपने को ही आद्य रामानन्दाचार्य बनाये का पाखण्ड किया है। चित्र को देखने से स्पष्ट विदित है कि यह चित्र किसी चित्रकार द्वारा निर्मित काल्पनिक चित्र नहीं है, प्रत्युत फोटो कैमरा द्वारा लिया गया किसी व्यक्ति का फोटो है और यह श्रीरामभद्राचार्यजी का ही किशोरावस्था का फोटो है, जो इस ग्रन्थ में प्रकाशित इनके फोटो चित्र से मिलान करने पर स्पष्ट विदित होता है। इस प्रकार अपने को ही श्री रामानन्दाचार्य बनाने की यह धूर्तता लोगों के आंख में दिन में ही धूल डालकर उल्लू बनाने तथा आचार्य रजनीश के समान अपने को ही भगवान् बनाने का ढोंग है। आजतक किसी ने श्रीरामानन्दाचार्य का यह फोटो नहीं देखा, मानने की बात तो पृथक् रहे। परन्तु यह मक्कारी अधिक समय तक टिक नहीं सकती। इसी प्रकार इस ग्रन्थ के आरम्भ में श्रीरामानन्दाचार्यजी को सरयू पारीण ब्राह्मण कुलावतंस लिखा है, जबकि वे कान्यकुब्ज वंश के थे और सर्वत्र यही लिखा मिलता है और सभी ऐसा ही मानते आ रहे हैं। तब इन्होंने उन्हें सरयूपारीण क्यों लिखा? किसी को भ्रम होगा कि श्रीरामभद्रदासजी ने शास्त्रों में अनुसन्धान करने पर उन्हें सरयूपारीण वंश का पाया होगा। इसलिए उन्हें सरयूपारीण का लिखा है परन्तु ऐसी बात नहीं है। न तो

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

किसी शास्त्र में उन्हें सरयूपारीण लिखा है और न इन्होंने अनुसन्धान कर ऐसा लिखा है। तब प्रश्न उठता है कि जब ऐसी बात नहीं है तो क्यों इन्होंने ऐसा सभों के विरुद्ध लिखा है ? इस प्रश्न का उत्तर इस ग्रन्थ के अन्त में लिखित विरुदावली है जिससे स्पष्ट है कि श्री रामभद्रदासजी सरयू पारीण वंश के हैं और इस प्रकार अपने को श्रीरामानन्दाचार्यजी के गोत्रापत्य वंशज उत्तराधिकारी सिद्ध करने एवं श्रीरामानन्दाचार्यजी को अपने वंश का सिद्ध करने के प्रयोजन से जो इन्हें ज.गु. बनने का वंशगत अधिकार वंश परम्परानुसार देता है के लिये इन्होंने उन्हें सरयू पारीण कुलावतंस लिखने का पाखण्ड किया है।

जब अथ (साध्य निर्देश) और इति (उपसंहार) पाखण्ड है तब सम्पूर्ण ग्रन्थ ही पाखण्ड है। जो सम्पूर्ण ग्रन्थके प्रत्येक श्लोकों के अध्ययन से स्पष्ट है। मैंने शीघ्रता में इसकी समीक्षा लिखी, परन्तु यदि इसकी पूरी समीक्षा की जाये तो हजारों प्रूफ लग जायेंगे। अतः 'थोडेहि में जानिअहि सयाने' स्थाली पुलाक न्यायेन विज्ञ विचारक समझ गये होंगे कि बहुना विद्वद्वरेषु पण्डित प्रवरेषु सुधी जनेषु। इत्यलम्।

॥ नूतन पंथ ॥

यह तथाकथित सम्प्रदाय वस्तुः नूतन पंथ है। इसके सिद्धान्त नये हैं–"नूतनेन केनचिद् दर्शनेन भवितव्यम्। ... अस्मात् प्रवर्तिते नूतने दर्शने प्रास्ताविकम्)।" अभिनव निवेदिता सुश्री कु० गीतादेवी कृत श्रीटीका।" जब श्रीरा. सिद्धान्त चन्द्रिका लिखने से श्रीरामभद्रदासजी जगदाचार्य हो गये हैं तो इसकी श्रीटीका लिखने से नवोदिता सुश्री भी जगदाचार्य या जगदाचार्याणी स्वतः होगी या उपजगदाचार्या हो गयी। इस नूतन पंथ की नूतन बातें सर्व भिन्ना ही होगी। भगवान व्यास के सूत्रों के वृत्ति लेखक श्रीबोधायनजी जगदाचार्य हुये तो सि. चं. की टीका लेखिका जगदाचार्या। ये भी अपने प्राक्कथन में 'नूतनदर्शन' की आवाज बुलन्द कर रही है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

११९=समीक्षा–इस श्लोक में "वृहत्वात्" "बृम्हणात्", "सर्व देहिपु रमणात" इन तीन हेतुओं से "राम एव पर ब्रह्म" साध्य की सिद्धि की गयी है। परन्तु सर्व प्रथम श्रीरामभद्रदास जी ब्रह्म के विषय में अनुमान को प्रमाण ही नहीं मानते हैं और यहाँ अनुमान द्वारा सिद्ध करने चले हैं। यह उनके लिये विरुद्ध हेत्वाभास और अपसिद्धान्त निग्रह स्थान है तथा प्रतिज्ञा विरुद्ध या प्रतिज्ञा संन्यास भी है। दूसरे इन हेतुओं से उक्त साध्य की सिद्धि नहीं की जा सकती। यह वृहत्व, बृम्हणत्व और सर्व देहिपु रमणत्व धर्म महत् (प्रकृति) में भी है। अतः इस सव्यभिचार या अनैकान्तिक हेतु से राम एव पर ब्रह्म साध्य की सिद्धि नहीं हो सकती। इससे तो महदमपि परब्रह्म सिद्ध होने लगेगा। परन्तु यहाँ 'एव' पद अन्य व्यवच्छेदार्थक है। वास्तुतः 'राम एव पर ब्रह्म' का साधक हेतु इसके साथ प्रयुक्त 'पर' (परः श्रेष्ठोरि दूरान्योत्तरे क्लीषन्तु केवले–मे०) वा परत्व हेतु ही है। यस्मात्परं नापरं चास्ति कश्चिन। न त्वत्समोऽस्त्यभ्यधिकः कुतोन्यो। न कि इन्द्र त्वदुत्तरं न ज्यायो अस्ति वृत्रहन्। न क्येवं यथात्वम् ॥साम० २०३॥" ही है। 'पर' की योजना, परमात्मा, परमतेज परमशक्ति, परमसत्ता आदि) ही परब्रह्मत्व का साधक है। इस प्रकार उक्त सव्यभिचार हेतु से साध्य की सिद्धि भी नहीं होती। टीका में जो श्रीरामतापनीयोपनिषद् श्रुति वाक्य-'रमन्ते योगिनोऽनन्ते नित्यानन्दे चिदात्मनि। इति राम पदेनासौ पर ब्रह्माभिधीयते॥" उद्धृत की गयी है। उसमें भी वृहत्वात्, बृम्हणात्, सर्वदेहिपु रमणात्'–हेतुत्रय राम एव परब्रह्म का साधक हेतु नहीं उपदिष्ट है, प्रत्युत अनन्तात्, नित्यानंदात् चिदात्मत्वात्–इन तीन हेतुओं का उपदेश है जो पारब्रह्म का महत् (प्रकृति) से व्यावर्तक है एवं सद्धेतु है। इस प्रकार श्रीरामभद्रदासजी का उक्त श्लोक उद्धृत श्रुतिवाक्य विरुद्ध एवं अप्रामाणिक तथा भ्रान्त है।

१।१०=समीक्षा—इस श्लोक में कहा गया कि "ब्रह्म शब्द प्रकृति, ब्रह्म, वेद एवं ब्राह्मण के अर्थ में गौणी वृत्ति से अर्थात् व्यवहार में प्रवृत्त हुआ है और मुख्य वृत्ति से यह ब्रह्म

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding by MoE-IKS

शब्द रमण कराने वालों में श्रेष्ठ सीतापति श्रीरामरूप अर्थ के ही बोध के लिये प्रयुक्त होता है।" परन्तु यह कथन भी भ्रान्त है वृत्तिर्नाम शक्तलक्षणान्यतर रूपा। शक्तिर्नाम घटादि विशेष्यक घटादि पदजन्यबोधविषयकत्व प्रकारक ईश्वर संकेतो नामेश्वरेच्छा। सैव शक्तिरित्यर्थः। शक्ति निरूपकत्वमेव पदं शक्तस्त्वम्। विषयता सम्बन्धेन शक्त्याश्रयत्वं शाब्दत्वम्। शक्य सम्बन्धो लक्षणा। सा द्विधा–गौणी शुद्धा चेति। गौणी नाम सादृश्य विशिष्ट लक्षणा। यथा सिंहो मानवक इत्यादौ सिंह पदस्य सिंह सादृश्य विशिष्टे लक्षणा ॥न्या.बो.॥", मुख्यत्वं च लक्ष्य व्यङ्ग्याऽर्थापेक्षया प्रथमोपस्थिति विषयत्वं बोध्यम्।" ब्रह्म शब्द का प्रकृति, ब्रह्मा, वेद एवं ब्राह्मण शब्दकोशोक्त अभिधार्थ (मुख्यार्थ) है। गीता में–'कर्म ब्रह्मोद्भवं विद्धि- ३।१५' ब्रह्म शब्द का वेद अभिधार्थ है। ब्रह्मशब्द का सिंहोमाणवक आदि के समान सादृश्य विशिष्ट लक्षणा में प्रकृति, ब्रह्म, वेद, ब्राह्मण के अर्थों में प्रयोग नहीं है। अतः यह गौणी वृत्ति नहीं है प्रत्युत मुख्य वृत्ति ही है और यह अनेकार्थक शब्द है। पुनः यह सामान्य शब्द है और सामान्य रूप से वस्तुवाचक है। जब तक इसके साथ इतर व्यावर्तक विशेषण शब्द 'पर' 'परम' आदि का प्रयोग नहीं किया जाये तब तक वह रमण कराने वालों में श्रेष्ठ सीतापति श्रीराम का ही बोधक नहीं हो सकता। केवल श्रीराम का ही बोधक बनानेके लिये इसके साथ इतर व्यावर्तक विशेषण जोडना अनिवार्य है। पण्डितजी की उपरोक्त मुख्य और गौण वृत्ति विषयक बातें सर्वथा शास्त्र विरुद्ध है। श्रीवैष्णव सिद्धान्तानुसार पर रूप (परब्रह्म) साकेत स्थित है।

१।११=समीक्षा–इस श्लोक में कहा गया है–"जिस ब्रह्म से सम्पूर्ण प्राणी जन्म लेते हैं तथा जिसकी सत्ता में जीवित रहते हैं, एवं प्रलयकाल में जिस ब्रह्म में विलीन होजाते हैं, वही सर्वव्यापक माया से परे श्रीराम पर ब्रह्म हैं।" परन्तु यह कथन भी भ्रान्त है। क्योंकि उक्त लक्षण सामान्य ब्रह्म का माया से परे पर ब्रह्म का नहीं। यह 'पादोऽस्य विश्वाभूतानि–

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

शु.य.३१।३" का लक्षण है "त्रिपादस्यामृतं दिवि--शु.य. ३१।३" का नहीं। 'त्रिपादस्यामृत दिवि' ही माया से परे श्रीराम परब्रह्म का बोधक है। अतः श्रीरामभद्रदासजी का उपरोक्त कथन ब्रह्म और पर ब्रह्म में भेदाग्रह के प्रभाव तथा पर ब्रह्म में ब्रह्म का लक्षण कहने से पर ब्रह्म का शुद्ध लक्षण नहीं है और भ्रान्त है।

१।१२=समीक्षा—इस श्लोक की टीका में कल्याण गुणों के कारण तथा प्राकृत गुणों का निषेध के कारण ब्रह्म को सगुण एवं निर्गुण दोनों कहा गया है। परन्तु यह कथन अनर्गल है एक प्रकरण में किसी पद का एक अर्थमें ही प्रयोग करना न्याय पूर्ण है। नहीं तो अनेकार्थ या भिन्नार्थक हेत्वाभास का दोष होता है। यहाँ सगुण के लिये गुण का अर्थ कल्याण गुण और निर्गुण के लिये गुण का अर्थ प्राकृतिकगुण लिया गया है जो दोहरा माण्डण्ड होने से भ्रान्त है। वस्तुतः इन दोनों ही परिघटकों में गुण का अर्थ दिव्य गुण ही श्रीरामानन्द सम्प्रदाय में इष्ट है—"श्रीमान् दिव्यगुणाब्धि०—वै.म.भा."। फिर सगुण का अर्थ दिव्यगुण के साथ दिव्यगुणवान् एवं निर्गुण का अर्थ निश्चय (नित्य) दिव्य गुणवान् है—'निर्निश्चयनिषेधयोः—मे०' यहाँ प्रथम अर्थ निश्चय (नित्य) का ग्रहण है। इस प्रकार सगुण से दिव्य गुण की सत्ता एवं निर्गुण से उस दिव्यगुण की सत्ता की नित्यता का निरूपण है। वह न केवल गुणवान् है। यही 'सगुण निर्गुण' कहने का अर्थ और तात्पर्य दोनों ही हैं। ग्रन्थकारने अपने अर्थ में 'कल्याण' और प्राकृत' दो शब्दों का अध्याहार या बाहर से जोडने का कार्य किया है। परन्तु जब स्वतः शब्द से ही अर्थ पूर्ण होजाता है, तब जोड घटाव या खींचतान हास्यास्पद है। पुनः इससे निर्गत अर्थ भी दोष पूर्ण है।

१।१३=समीक्षा—श्लोक १।१२ की समीक्षा से ही इसकी समीक्षा होगी। पुनः गुणों को प्रकट करने एवं समेटने वाली बात अनर्गल है। ब्रह्म का गुण कादाचित्क नहीं है जो कभी प्रकट

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

होता है और कभी विलीन हो जाता है। सूर्य का प्रकाश सदा रहता है। वह न तो अपने प्रकाश को प्रकट करता है और न समेट लेता है। यह दूसरी बात है कि कुहासा, बादल आदि के कारण हम उस प्रकाशको या सूर्य को कभी नहीं देखते हैं। इस प्रकार परब्रह्म श्रीराम के साथ उसके गुण को भी नहीं देखते हैं। इस प्रकार परब्रह्म श्रीराम के साथ उसके गुण का भी नित्यसाहचर्य है और सतत प्रकट है। यह दूसरी बात कि "धूमेनाव्रियते वह्निर्यथादर्शो मलेन च। यथोल्बेनावृतो गर्भस्तथा तेनेद मावृतम्। आवृतं ज्ञानभूतेन ज्ञानिनो नित्य वैरिणा। कामरूपेण कौन्तेय दुष्पूरेणानलेन च॥ अज्ञानेनावृतं ज्ञानं तेन मुह्यन्ति जन्तवः" आदि के कारण वह गुण कभी प्रकट नहीं मालूम पडता है। परन्तु वह सतत प्रकट है। प्रभा जाई कहां भानुहि जाई कहां चन्द्रिका चन्द्र तजि जाई। श्रीराम का गुण विकारी नहीं है कि उसमें उपचय अपच, विकास संकोच, प्रकटीकरण आदि विकार हो। ऐसा होने पर वह अनित्य हो जायेगा। अतः यह श्लोक १।१३ भ्रान्त है।

१।१४=समीक्षा—इस श्लोक की बात भी भ्रान्त है की श्रीराम का गुण एक रूप नित्य है। उसमें आविर्भाव तिरोभाव रूप विकार नहीं होता ऐसा होने से यह गुण अनित्य भी होगा। श्लोक १।१२।१३ की समीक्षा से इसका भी खण्डन हो गया श्रीराम के गुण का आविर्भाव तिरोभाव वाला विकारी और अनित्य बतलाना सर्वथा भ्रान्त है।

१।१५=समीक्षा—इस श्लोक में अनुमान का प्रयोग है और लेखक ब्रह्म के विषय में अनुमानको प्रमाण ही नहीं मानते हैं और यहां अनुमान का ही प्रयोग कर रहे हैं। यह इनके लिये विरुद्ध हेत्वाभास एवं अपसिद्धान्त निग्रह स्थान है। इसे मानने पर इनका अनुमान विषयक प्रतिपादन असत्य सिद्ध होजाता है और यदि अनुमान वाला प्रतिपादन को सत्य मानते हैं तो यहां अनु

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मान से सिद्ध करना असत्य हो जाता है और यदि अनुमानवाला प्रतिपादन को सत्य मानते हैं तो यहां अनुमान से सिद्ध करना असत्य हो जाता है। अतः उभयतः पाशा रज्जु है।

२।१=समीक्षा– इस श्लोक में जीव का लक्षण प्रमाता (प्रमातारो जीवा) कहा गया है, जिसकी टीका में "जीव ही इस प्रमेय ब्रह्म की प्रमिति के कारण प्रमाता कहे जाते हैं" लिखा है। परन्तु जीव का यह अव्याप्रातिव्याप्तासम्भव रूप दोष त्रय रहित सल्लक्षण नहीं है। जैसे जीव लक्षण विद्वान् होना अव्याप्त लक्षण है क्योंकि यह सभी जीवों में नहीं है। इसी प्रकार यह प्रमाता लक्षण भी अव्याप्त प्रलक्षण है। यंस्येरसा जिज्ञासा प्रयुक्तस्य प्रवृत्तिः सप्रमाता–वा.भा"–यह प्रमाता का लक्षण है और यह सभी जीवों में नहीं पाया जाता। यदि इसे जीव का लक्षण मानें तो सभी जीव नहीं कहे जा सकते जो भ्रान्त हैं। टीका में हेतु दिया गया है कि ब्रह्म की प्रमिति के कारण प्रमाता कहे जाते हैं। प्रमिति का लक्षण–" "यत् अर्थ विज्ञानं सा प्रमितिः–वा.भा." और सभी जीवों को ब्रह्म का अर्थ विज्ञान नही होता। इसलिए सभी को ब्रह्म की प्रमिति नहीं होने के कारण सभी जीव नहीं कहे जायेंगे। अतः यह युक्ति भी भ्रान्त है। इस प्रकार यह अव्याप्त लक्षण है। जीव का शुद्ध लक्षण 'नित्योज्ञश्चेतनोऽजः सतत परवश०" है, जिसे जगद्गुरु श्री रामानन्दाचार्यजी ने श्रीवैष्णवमताब्ज भास्कर में निरूपित किया है। उसके विपरीत इस श्लोक का जीव का भ्रान्त लक्षण दिया गया है, जो हास्यास्पद है।

२।२=समीक्षा—इस श्लोक में ३१ विकारों को धारण करना ही जीवों का जीवन है इसलिए इन्हें जीव कहा जाना लिखा है। परन्तु यह अनुमान वाक्य है और लेखक अनुमान को प्रमाण मानते ही नहीं है। तब यह अनुमान उनके लिए वदतो व्याघ्यात पूर्ण, विरुद्ध एवं अपसिद्धान्त दोष है। यदि अनुमान प्रमाण नहीं है तो यह अनुमान अप्रामाणिक है और यदि यह

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अनुमान प्रामाणिक है तो अनुमान प्रमाण है। अतः उभयतः लेखक के कण्ठ में कांटा है। पुनः इस श्लोक में ३१ संख्या परिमित विकार कहा गया है वह भी भ्रान्त है और गीता के "महाभूतान्यहंकारो बुद्धिरव्यक्तमेव च। इन्द्रियाणि दशैकं च पञ्च चेन्द्रिय गोचराः ॥१३।५॥ में कथित २४ प्रकार के क्षेत्र (पंचमहाभू+अहंका+बुद्धि+अव्यक्त+एकादशेन्द्रिय + पंचविषय= २४) तथा-"इच्छाद्वेषः सुखं दुःख संघातश्चेतना धृतिः ।१३। ६॥' में कथित इच्छा (पुण्या=दान परित्राणं परिचरणं, दयां स्पृहां श्रद्धां, सत्यं, हितं प्रियं स्वाध्यायं चेति, पाया= हिंमास्तेय, प्रतिसिद्ध मैथुनानि (कामो मत्सर स्पृहा तृष्णा लोभ (इति) द्वेष (क्रोध ईर्ष्याऽसूया द्रोहोऽमर्ष इति) सुखं (सात्त्विक राजस तामस) दुखं (आधिभौतिक, आधिदैविक, आध्यात्मिक) संघात (षट्विकार=विकारो परिणति=जायते, अस्ति विपरिणमते, वर्धते अपक्षीयते, विनश्यतीती षट् भाव विकारा ॥ चेतना, धृति धृत्या यया धारयते मनः प्राणेन्द्रिय क्रियाः। योगेनाव्यभिचारिण्या धृतिः सा पार्थ सात्त्विकी। यया स धर्म कामार्थान्धृत्या धरयते- ऽर्जुन। प्रसंगेन फलाकांक्षी धृतिः सा पार्थ राजसी ॥ यया स्वप्नं भयं शोकं विषादं मदमेव च। न विमुञ्चति दुर्मेधा धृतिः सा पार्थ तामसी ॥) के विपरीत है। इस लोक में गीता के श्लोक १३।५ में कहे क्षेत्र एवं श्लोक १३।६ में विकारको मिला दिया गया है और सभों को विकार ही कहा गया है जब कि गीता में इन्हें स्पष्ट शब्दों 'एतत्क्षेत्रं समासेन सविकारमुदाहृतम्' में क्षेत्र और विकार दोनों को अलग कहा गया है। पुनः गीता के श्लोक में इन्हें 'समासेन' कहा गया है। अतः इसे ३१ संख्या परिमित या किसी संख्या परिमित कहना भ्रान्त है, पुनः गाय शृङ्ग, पुच्छ, नेत्रादि धारण करती है परन्तु वह इसका ज्ञापक लक्षण नहीं है, इसका ज्ञापक लक्षण साश्नात्व ही है। इसी प्रकार जीव अनेक विषय वस्तु धारण करता है, परन्तु इसका लक्षण केवल प्राण धारण ही है-"जीव प्राणधारणेपा०'। यों

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

ज्ञानाधिकरणत्व भी जीव का लक्षण है–ज्ञानोधिकरणमात्मां स द्विविधः जीवात्मां परमात्मा चेति ।" परन्तु यह लक्षण परमात्मा में भी घटित होने से अति व्याप्त लक्षण होने से जीव का जीव प्राण धारणे लक्षण ही पाणिनि कृत सर्वथा निर्दुष्ट है । अतः श्लोक में केवल "प्राणांश्च धारयन्तीति जीवन्ति तस्माज्जीवा इतीर्यते" इतना अंश ही ठीक है शेष 'एकत्रिंशत विकाराञ्च संयुतान्" वाक्य खण्ड भ्रान्त है ।

२।११=समीक्षा–इस श्लोक के प्रथम चरण साध्यनिर्देश प्रतिज्ञा वाक्य–"निस्वार्थः करुणासिन्धुः जीवानामीश्वरः सुहृत्–" को सिद्ध करनेके लिये द्वितीय चरण में हेतु वाक्य–" भक्तोऽसि मे सखा चेति गीतावाक्यात सुनिश्चितम्" दिया गया है । परन्तु यह हेतु (उदाहरण साधर्म्यात साध्य साधनं हेतुः) वाक्य वस्तुतः साध्य विपरीतसाधकं विरुद्धः' हेतु है, क्योंकि यह 'भक्तोऽसि मे सखा चेति' हेतु निर्देशित साध्य "निःस्वार्थ" का विपरीत साधक है । उक्त साध्य का साधक हेतु तो गीता वाक्य– "समोऽहं सर्व भूतेषु न में द्वेष्योऽस्ति न प्रियः" ही हो सकता था अथवा 'भोक्तारं यज्ञ तपसां सर्वलोक महेश्वरम् । सुहृदं सर्व भूतानां ज्ञात्वा मां शान्तिमृच्छति ।", गतिर्भर्ता प्रभुः साक्षी निवासः शरणं सुहृत् । प्रभवः प्रलयः स्थानं निधानं बीजमव्यम । हो सकता था । पुनः प्रथम चरण के प्रतिज्ञा वाक्य में 'सुहृत्' शब्द है और द्वितीय चरण के हेतु वाक्य में 'सखा' शब्द । सामान्य रूप से सुहृत और सखा शब्दों में भेद दृष्टिगोचर नहीं होता परन्तु विशेष रूप से दोनों में भेद है–"अत्याग सहनो बन्धुः सदैवानुगतः सुहृत । एक क्रियं भवेन्मित्रं समप्राणः सखा स्मृतः ।।" अतः 'सुहृत्' साध्य के प्रकरण में 'सखा' हेतु अनुपयोगी है ।

२।१२=समीक्षा–इस श्लोक में प्रयुक्त "भगवानिव" पद भ्रान्त है । भगवान् का जन्म होता है और जीव का भी जन्म

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

होता है, परन्तु भगवान् का जन्म दिव्य और स्वेच्छापूर्वक होता है, जब कि जीवका जन्म कर्मफलवश एवं परेच्छा पूर्वक होता है। पुनः भगवान् की मृत्यु नहीं होती और जीव की मृत्यु होती है। यद्यपि भगवान् और जीव दोनों हीं तत्त्वतः जन्म मरण रहित हैं, परन्तु जीव के शरीर के साथ सम्बन्ध शरीर की उत्पत्ति और विनाश के साथ होने से जीव के शरीर की उत्पत्ति और विनाश होता है, परन्तु भगवान् के शरीर का नहीं। इस प्रकार इस लोक में वर्णित जीव के स्वरूप का "भगवानिव" कहना सर्वथा भ्रान्त है। भगवान् जीवात्मा के भी अन्तर्व्याप्त होने से अन्तर्यामी है, परन्तु जीवात्मा ऐसा नहीं है।

२।१३=समीक्षा—इस श्लोकमें जीवात्मा (देही) को केवल देह से भिन्न बतलाया गया है। परन्तु जीवात्मा इन्द्रिय, मन और बुद्धिसे भिन्न है—इन्द्रियाणि पराण्याहुरिन्द्रियेभ्यः परं मनः। मनसस्तु परा बुर्द्धिर्यो बुद्धेः परतस्तु सः॥", 'देह प्राण मनो-विलक्षणतरो"।

२।१४=समीक्षा—इस श्लोक के "प्रथम चरण में ईश्वर का अन्तर्यामित्व जीव के सथ रहने (जीवेन सह तिष्ठति) हेतु से सिद्ध किया गया है जो भ्रान्त है अन्तर्व्याप्ति से अन्तर्यामित्व सिद्ध हो सकता है सह स्थिति से तो केवल बाह्य यामित्व ही सिद्ध होता है। अतः उक्त प्रतिज्ञात साध्य 'अन्तर्यामित्व' के लिये 'जीवेन सह तिष्ठति' नहीं प्रत्युत "जवेषु तिष्ठति" हेतु अपेक्षित है। पुनः द्वितीय चरण-"शरीरे तं विना चासौ न स्थातुं हि प्रभुर्भवेत्" तो प्रत्यक्ष असत्य है। क्योंकि परमात्मा जो मृत शरीर में भी व्याप्त रहता है। किसी शरीर में जीव की स्थिति कर्मफलभोग वशात् रहती है (आत्मनो भोगायतनं शरीरम्) न कि उसमें ईश्वर के अन्तर्यामित्व के कारण।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पुनश्च अन्तर्यामि रूप से परमात्मा जीव के साथ प्रत्येक शरीर में ही नहीं, अपितु शरीरों के बाहर भी सर्वत्र सर्वव्यापक रूप से विराजते हैं पुनः व्यापकता के कारण जीव को स्थिर रहने के लिए नहीं। अतः श्रीरामभद्रदासजी का उपोक्त द्वितीय हेतुवाक्य सर्वथा भ्रान्त है सर्वव्यापक और अन्तर व्यापक होने के कारण' वह सर्वज्ञ और अन्तर्यामि है इस प्रकार उपरोक्त द्वितीय वाक्य भ्रान्त है।

२।१५=समीक्षा–इस श्लोक में "सूत्रश्रुतिस्मृतिपुराणवचोभिः" एवं युक्तियुक्ता" कहा तो गया है किन्तु यहां कोई भी ब्रह्म-सूत्र वाक्य, पुराण वचन एवं युक्ति युक्त का प्रयोग नहीं है। अतः इस श्लोक का कथन भ्रान्त है।

२।१६=समीक्षा—इस श्लोक में जीव का स्वाभाविक भेद विषयी, साधक, सिद्ध कहा गया है। जो सर्वथा भ्रान्त है। यह स्वाभाविक भेद नहीं है प्रत्युत कर्मानुसार कृत्रिम भेद है। स्वभाविक भेद तो बद्ध, मुक्त और नित्य मुक्त है, जिसका निरूपण श्रीवै.म. भास्कर में किया गया है। लगता है यह स्वभाविक विभाग श्रीरामभद्रदासजी ने 'स्वभाव' शब्द के अर्थ पर विना विचार किये ही लिखे हैं।

२।१७=समीक्षा—इस श्लोक में विषयी जीव का लक्षण शब्द स्पर्श रूप रस गन्ध इन पांचों विषयों में बंधे हुये, किया है जो भ्रान्त है। ॐकारो वें सर्ववाक् भगवान्नाम, संकीर्तन सङ्गीत, वेदगान (इन्द्राय साम गायत, मद्भक्ता यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारद) आदि उत्कृष्ट शब्दों में तृप्त विषयी नहीं वा विषय वह नहीं प्रत्युत विषय मुक्त हैं। इसी प्रकार भगवद्रूप-दर्शन का तृपित विषय मुक्त है, इसी प्रकार भगवान् के चरणों का स्पर्श, उनके प्रसाद चरणामृतरसों एवं उनके अर्पित पुष्पादि के गन्ध में मत्त विषयी नहीं प्रत्युत विषय मुक्त है। "होहि

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कुवस्तु सुवस्तु जिमी पाइ कुयोग सुयोग ।" ये शब्दादि पांच विषय बन्धन या मुक्ति कारक नहीं है, प्रत्युत इनका दुरुपयोग और सदुपयोग बन्धनकारक और मुक्तिकारक है । अतः विषयी जीव का उक्त लक्षण नहीं है प्रत्युत काम क्रोध लोभादि विषय वासनाबद्ध ही विषयी का लक्षण है ।

२।१८=समीक्षा–इस श्लोक में साधक जीव के जो लक्षण कहे गये हैं, उसमें "जीवत्व लब्धये" प्रयोजन सर्वदा भ्रान्त है । जीवत्व प्राप्य नहीं है, प्रत्युत श्रीरामजी प्राप्य हैं–"प्राप्यः सर्व गुणार्णवो निखिलभूरक्षैकदीक्षो महान्, नित्यश्चेतन ईश्वरः सकरुणः सर्वज्ञता भूमिराट् । औदार्यादिगुणावलिभित ऋतं सत्यं च सर्वाश्रयः । श्रीरामो हि परात्परः सुमतिभिः ज्ञेयः सदा सर्वगः ।। इस अभियुक्तोवित एवं जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्यजी ने कि प्राप्यम् प्रश्न के उत्तर में कहा है–"श्रीमान्दिव्गुणाब्धिरौपनिषदो हेतुः शरण्यः प्रभुर्देवेशो जगतामनादिनिधनो ब्रह्मादि देवार्चितः । तारार्कानलचन्द्रमो बहुमहः सौदामिनी भासकोऽजय्यो वीर सपत्नशस्त्रनिचयैर्जैना च तेषां मुहुः । नित्यो ब्रह्म विधायकश्च पुरुषो वेदपदा ब्रह्मणे, नित्यानां शरणं तपः प्रभृतिभिः सद्योगिनां दुर्लभः । एकश्चेतनचेतनो भूत जगद्ध्येयः स्वतन्त्रो वशी, स प्राप्योस्ति मुमुक्षुभिः सुगुरुभिः सत्सङ्गिभिस्तत्परैः ।।" अतः श्री रामभद्रदासजी का उक्त कथन भ्रान्त और श्रीरामनन्दसम्प्रदाय के सर्वथा विरुद्ध है ।

२।१९=समीक्षा–इस श्लोक में सिद्ध जीव का लक्षण कहा गया है और कहा गया है कि सिद्ध जीव विधि निषेध से विमुक्त हो जाता है । यह कथन भ्रान्त है । जीव सतत परवशः और प्रभु के विधि निषेध के नियन्त्रण में ही रहता है । यदि वह कदाचार या दुराचार करता है तो न केवल निन्दित अपितु दण्डित भी होने योग्य है । इसे नहीं समझने के कारण

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कुछ अहं मन्य अपने को सिद्ध मानकर आचार और व्यभिचार में स्वतन्त्र मानते हैं–'ईश्वरोहमहं भोगी सिद्धोऽहं बलवान्सुखी ।'

२।२०=समीक्षा—इस श्लोक में मोक्ष का लक्षण केवल बन्धनों से मुक्ति कही गयीहै-"मोक्षस्तु बन्धनात् मुक्तिः", परन्तु श्रीरामानन्द सम्प्रदाय में केवल बन्धनों से मुक्ति को मोक्ष नहीं माना गया है अपितु बन्धन मुक्त होकर श्रीसाकेत प्राप्ति को मोक्ष माना जाता है–"गत्वा परब्रह्म सुवीक्षितोथ । प्राप्यं महामन्द महब्धि मग्नो नावर्तते जातु ततः पुनः सः ॥ श्रीवै.म.भा.

२।२५ समीक्षा–इस श्लोक में 'तीर्त्वा' में अव्ययार्थक प्रत्यय 'क्त्वा' और 'स्वीकृत्य' पद में अव्ययर्थक प्रत्यय 'ल्यप्' क्रिया के स्वाभाविक क्रम का निरूपक है । परन्तु श्लोक कि क्रियायें (१) गुरौः पदाम्भोरुहचारुनौकया तीर्त्वा महात्मा भवभीम सागरम्', (२) स्वीकृत्यदास्यं दृढभक्ति लक्षणम्', (३) जीवः प्रमाता प्रममोत राघवम्" स्वभाविक क्रम का अतिक्रमण 'भुक्त्वा पक्त्वा स्वपिति' के समान करने से व्युत्क्रम कथन स्वरूपतः अप्रामाणिक है । भवसागर के पारकर लेने के पूर्व ही दास्य भाव ग्रहण किया जाता है और ग्रन्थकर्ता का नाम भी उनको अपने पद कमल रूप सुन्दर नौका की सहायता से भयङ्कर भवसागर को पार करा चुकने के पूर्व ही, गुरु बनने मन्त्र देने काल में हीं 'रामभद्रदास ही दिया था तथा दास्यभाव की उपासना का उपदेश दिया था परन्तु भवसागर में रहते ही इन्होंने इस गुरुप्रदत्त दास नाम और दास्यभाव को वैसे ही फेंक दिया है जैसे कोई जीर्णवस्त्र को और द्रोही जीव के समान स्वयं को रामभद्रदास से ज.गु. श्रीरा. स्वा. रामभद्राचार्य' घोषित कर दासत्व से मुक्त होकर रामभद्रस्यदासः के स्थान पर रामभद्रस्य आचार्यः बन गये । 'रामभद्रस्य आचार्य भले ही नहीं बन सके या कहला सके परन्तु

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

रामभद्रो आचार्यः यस्य तो कहेंगे ही । तब दास्यभाव रहा कि शिष्य भाव हुआ । इन्हें न तो शिष्यभाव भवसागरपार उतारने वाले गुरु महाराजजी के माध्यम से प्राप्त हुआ और न स्वयं अर्जुन के समान स्वभाविक जिज्ञासावश "यच्छ्रेयः स्यान्निश्चितं ब्रूहि तन्मे शिष्यस्तेहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम्" शब्दों में फूटपड़ा । जो हो फिर दुनियां को उपदेश अपने शब्दों द्वारा दे रहें हैं, उसका स्वयं अपने ही आचरण द्वारा तिरस्कार कर तुच्छ बतला रहे हैं और खण्डन कर रहे हैं । तारीफ तो यह है कि उक्त श्लोक में दास्यभाव (१) न तो साधन रूप में उपदिष्ट है (२) न साध्य (फल) रूप में और (३) न साधन और फल उभय रूप में ही । क्योंकि साधन गुरु की सहायता और लक्ष्य साक्षात्कार है, दास्यभाव नहीं । दास्यभाव तो अन्यथासिद्ध रूप में भवसागर पार उतरने के पश्चात् और साक्षात्कार करने के पूर्व मध्यकाल में कहा गया है जो अनावश्यक और व्युत्क्रम है । दास्यभाव तो तीनों ही (स्थितियों भवसागर पार होने के पश्चात् और साक्षात्कार के पश्चात्) के लिये आवश्यक है । इसे भवसागर पार होने के पश्चात् और साक्षात्कार के पूर्व ही कैसे कहा गया है । सन्त श्रीतुलसीदासजी के मानस में काकभुषुण्डीजी ने भवसागर पार करने के लिये दास्य को आवश्यक कहा है—'सेवक सेवा भाव विनु भव न तरिये उरगारि ।' तब भवसागर पार होने के पश्चात् क्यों ? सच तो यह है कि दास्य भाव ही नहीं अपितु सखाभाव, वात्सल्यभाव, सखिभाव आदि किसी भी सम्बन्धभाव की अपेक्षा है, क्यों सभों का तात्पर्य दास्य नहीं प्रत्युत सेवा में है । मित्रभाव से सेवा, पुत्रभाव से सेवा पिता भाव से सेवा, सखि भाव से सेवा आदि । इसलिये श्रीरामानन्द सम्प्रदाय में केवल दास्यभाव ही नहीं अपितु सभी भाव हैं जिन्हें पञ्च रसोपासना कहते हैं । इस सम्प्रदाय में केवल दास्यभाव

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

का कथन पूर्वाचार्यों के विरुद्ध, शास्त्र विरुद्ध, और कलहोत्पादक है। यहां रुचिनां वैचित्र्यात् स्वेच्छानुसार दास्यादि भावों की स्वतन्त्रता है। किसी एक ही भाव की नहीं। इस प्रकार उक्त श्लोक सर्वथा असामञ्जस पूर्ण है। क्या भवसागर पार उतर जाने के बाद रामभद्राचार्यजी दास्य भाव को स्वीकार करेंगे और अपना नाम तदनुकूल और तदनुसार रामभद्रदास रखेंगे ? यदि नहीं, तो उनका यह श्लोक उनके ही अनुसार अप्रामाणिक और भ्रान्त क्यों नहीं है ?

३।१८=समीक्षा–इस श्लोक में तैत्तिरीय श्रुति के 'आकाश शरीरं ब्रह्म।' का अर्थ–'ब्रह्म का शरीर आकाश के समान व्यापक गम्भीर निर्लेप एवं नीला है' लिखा गया है, वह भ्रान्त है। यहां आकाश विशेषण नहीं विशेष्य है। यहां उपमा बोधक वत् इव, अनु, सदृश आदि कोई शब्द ही नहीं है। श्रुति में मन्त्र है–'हिरण्य मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम। योऽसावादित्ये पुरुषः सोऽसावहम। ओ३म् खं ब्रह्म॥ शु.य. ४०।१७॥" यहां खं ब्रह्म में विशेष्य है, विशेषण नहीं। ब्रह्म का शरीर आकाशके समान है। यह अर्थ अभीष्ट नहीं है, प्रत्युत आकाश ब्रह्म का शरीर है, यह अर्थ अभीष्ट है। आकाश को ब्रह्म का शरीर विशेष पैर कहा जाता है। और विष्णु पद शब्द आकाश शब्द का पर्याय है ओ३म् खं ब्रह्म में आकाश को ब्रह्म कहा गया है न कि आकाश के समान।' 'आकाश शरीरं ब्रह्म' के आनन्दभाष्य में लिखा है–आसमन्तात् काशते प्रकाशन इत्याकाशं देदीप्यमानमाकाशं शरीरं यस्य देदीप्यमान विग्रह विशिष्टं ब्रह्म भवति।' यही अर्थ उपरोक्त शु.य. ४०।१७ मन्त्र के ओ३म् खं ब्रह्म का उस मन्त्र में पठित "हिरण्यमयेन" एवं 'आदित्ये" शब्दों के योग से भी प्रतिपादित होता है। यहां देदीप्यमान के समान अर्थ नहीं है। प्रत्युत देदीप्यमान अर्थ है। यदि उपमा बोधक अलंकारिक अर्थ ही माना जाये तो आकाशवत् का अर्थ 'आकाश के समान व्यापक, गम्भीर

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

एवं नीला नहीं हो सकता। क्योंकि ठोस पदार्थों के भीतर आकाश व्यापक नहीं है, इसी प्रकार यह गम्भीर गहरा भी नहीं है और नीला भी नहीं है। नीलत्व तो औपाधिक एवं भ्रान्त है। अतः आकाशवत् का ये अर्थ मानने पर ब्रह्म न तो सर्वव्यापक '(तदनन्तरस्य सर्वस्य तदुसर्वस्य बाह्यतः) तो होगा किन्तु (तदन्तरस्य सर्वस्य नहीं) हो सकता है, न गम्भीर (गहरा और न निरूपाधिक या नीला ही। वस्तुतः आकाशवत् का अर्थ तो उपरोक्त आनन्दोक्त अर्थ ही है, फिर दूसरा अर्थ ही है, फिर दूसरा अर्थ आकाशवत् सर्वगतश्च नित्यः। निर्लेपः, सूक्ष्मतमः, ॐकार शब्द गुणम्. ॐकार स्वरूपः। आदि है। पुनः यहाँ उपमा बोधक मानना लेखक के श्लोक ३।११ के विरुद्ध भी है। यदि श्लोक ३।११ को सत्य मानते हैं तो यह श्लोक ३।१८ का अर्थ असत्य हो जाता है और यदि इस ३।१८ के अर्थ को सत्य मानते हैं तो श्लोक ३।११ असत्य सिद्ध होता है। अतः उभयतः पाशा रज्जु है। सांप छुछुन्दर की स्थिति है। लेखक के ग्रन्थ में पदे पदे विरुद्ध हेत्वाभास और अपसिद्धान्त निग्रह स्थान है और यहां भी वही है। वस्तुतः ३।११ और ३।१८ दोनों ही गलत है जैसा कि दोनों की समीक्षा से स्पष्ट है। न तो ब्रह्म में उपमान प्रमाण का बाध है और न ब्रह्म आकाश के समान नीला है।

३।१९=समीक्षा—इस श्लोक की बातें भ्रान्त हैं। परब्रह्म का आकार नहीं होता रूप होता है। आकार डुकृञ् करणे धातु से निष्पन्न क्रिया जन्य उत्पन्न एतावता अनित्य है और 'रूप' (रूप स्वभावे सौन्दर्ये मे०) स्वभाविक सौन्दर्य है यह अकृत्रिम एतावता नित्य है। परब्रह्म वस्तुतः साकार निराकार से परे स्वभाविक नित्य सौन्दर्यवान् दिव्य है। देवताओं के सम्बन्ध में भी निरुक्त में कहा गया है-"आत्मजन्मानः। आत्मैवैषां रथो

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

भवति । आत्माश्वः । आत्मायुधः । आत्मेध्वः । आत्मासर्वं देवस्य देवस्य ॥ नि० ७।१॥"

३।२०=समीक्षा-यह श्लोक भी भ्रान्त है श्रुति में ब्रह्म को 'आकाश के समान नीला' कहीं भी नहीं कहा है और न वह आकाश के समान औपाधिक नीला है ही। इसी प्रकार केवल शिशुरूप श्रीरामजी को ही देखने का उपदेश नहीं है, अपितु अपनी अपनी रुचि के अनुरूप बाल किशोर सभी रूप श्रीरामों को देखने का उपदेश है। मन्दिरों में बालक्रीडा प्रधानकाल (प्रातःकाल) में "भए प्रकट कृपाला" ऐसे बालरूप की, राजसभा काल (मध्यानोत्तर काल) में "जय जय अविनाशी०" से ऐश्वर्य रूप की और माधुर्य काल प्रधान (रात्रिकाल) में "श्रीरामचन्द्र०" से सौन्दर्यरूप की उपासना प्रायः सभी सामान्य मन्दिरों में होती है। यों मिथिला श्रीसीतारामजी युगलोपासना प्रधान है। जगदाचार्यजी श्रीरामानन्दाचार्यजी महाराज ने श्रीवैष्णव मताब्जभास्कर में "रामस्य साङ्गस्य सपार्षदस्य सीतासमेतस्य सहानुजस्य। कैंकर्यमीर्ष्यारहितः प्रकुर्वन् क्षिपेत्स्वकालं सततं सुभक्तः" श्रीसीतासमेत रूपकी उपासना का उपदेश दिये हैं। इसी प्रकार उन्होंने आकाश के समान नीला नहीं प्रत्युत "नीलमणि" (नालाश्म कान्तिं भजे) समान कहा है जो अनौपाधिक है। 'नीलन्तु नीलरक्ते ना-मे०'।

३।२१=समीक्षा—यहां वेदानुवचन को द्वितीय प्रमाण कहा गया है एवं ३।२ में प्रत्यक्ष को प्रथम तथा वेदानुवचन को द्वितीय प्रमाण कहा गया है। यहां वेदानुवचन का विग्रह—वेदाश्च तदनुकूलानां वचनानि यस्मिन् तत वेदानुवचनम्" की गयी है और लिखा है-"अर्थात जिस प्रमाण में वेद एवं उसकी अनुकूल श्रुतियाँ श्रीरामचरित मानस सभी पुराण उपपुराण, तथा रामायण और महाभारत। यह सम्पूर्ण आर्ष वाङ्मय वेदा-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

नुवचन ही है ।" प्रथम शब्द के दो अर्थ होते हैं–"प्रथमस्तु भवेदादौ प्रधानेऽपि च वाच्यवत्-मे० ।" यहां लेखक को कौन अर्थ इष्ट है, प्रधान या आदि ? यदि प्रधान अर्थ इष्ट है तब क्यों प्रत्यक्ष प्रधान है और वेदानुवचन अप्रधान ? इसी प्रकार यदि 'आदि' अर्थ अभिप्रेत है तो क्यों प्रत्यक्ष आदि है और क्यों वेदानुवचन परवर्ती दूसरा ? वास्तव में प्रधान वेद ही है– "प्रत्यक्षेणानुमित्या वा यस्तूपायो न बुध्यते । एतं विदन्ति वेदेन तस्मात् वेदस्य वेदता ।।" किञ्च वैदिक प्रत्यक्ष को ही प्रधान माना जाता है–'गावो पश्यन्ति गन्धेन वैदैः पश्यन्ति वै द्विजाः ।" वेदान्त सूत्र में भी–'प्रत्यक्षानुमानाभ्याम्' में प्रत्यक्ष का अर्थ श्रुति है, एवं वेदों को ऋषियों ने प्रत्यक्ष किया, इसलिए वे ऋषि कहलाये–"ऋषिः दर्शनात् अतः प्रधानता के अर्थ में प्रधान वेद है, प्रत्यक्ष नहीं । प्रत्यक्ष से प्रधान वेद है । वेदः स्मृतिः सदाचारः क्रम में भी प्रथम वेद ही पठित है । पूर्वापर क्रम में भी प्रथम (आदि) वेद ही नित्य होने के कारण है या प्रथमोत्पत्ति ॐकार तथा वेद से ही है । फिर 'वेदानुवचन' का विग्रह 'वेदश्च तदनुकूलानां वचनानि यस्मिन् तत्' कैसे होगा ? वेदानुवचन शब्दान्तर्गत 'अनु' शब्द का अर्थ अनुकूल या तदनु- नहीं होता है प्रत्युत–'अनु हीने सहार्थे च पश्चात्सादृश्ययोरपि । लक्षणेत्थम्भूताख्यानभागवीप्सास्वनुक्रमे । आयामे च समीपे च–मे० 'अनु इति सादृश्यापरभावम्-नि०" होते हैं । अतः वेदानुवचन का अर्थ वेदेन सह, वेदात्पश्चात्, वेदसादृश्य, वेदलक्षण, वेदाख्यान आदि होगा वेदानुकूल नहीं । पुनः वेदानुकूल तो वेदभाष्य एवं वेद व्याख्यान (ब्राह्मण), वेदाङ्ग, उपवेद, उपनि- षद्, दर्शन आदि भी हैं और प्रधानतया हैं । परन्तु इनका उल्लेख नहीं किया गया है ।

३।२२=समीक्षा—इस श्लोक में केवल श्रुति एवं स्मृति के परिशीलन से परब्रह्म के साक्षात्कार करने की बात कही गयी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

है और श्लोक ३।२१ में प्रोक्त मानस, पुराण इतिहास आदि अन्य सभी वाङ्मयों को त्याग कर उनका तिरस्कार किया गया है, जो भ्रान्त है। सच तो यह है कि 'इतिहास पुराणाभ्यां वेदं समुपबृंहयेत्। बिभेत्यल्पश्रुताद्वेदो मामयं प्रहरिष्यति।'

३।२३=समीक्षा–इसमें श्रुति को पत्नी और ब्रह्म को पति कहा गया है। परन्तु यह श्रुति अपने शब्द विग्रह से ब्रह्म की पत्नी है या शब्द रूपा श्रुति की अधिष्ठात्री देवी विग्रह विशेष से? पुनः यज्ञो वै विष्णुरुक्तः तथा 'पत्युर्नो यज्ञ संयोगे, पा० यज्ञ सम्पादिका वा यज्ञफल भोक्त्री होने से श्रुति यज्ञ ब्रह्म की पत्नी होने से एवं यज्ञफल भोक्ता यज्ञ रूप को पति होना अभीष्ट है या किस प्रकार पतिपत्नी सम्बन्ध इन्हें इष्ट है इसका बिना निरूपण किये पतिपत्नी सम्बन्ध स्थापित ही नहीं होता।

३।२४=समीक्षा–इस श्लोक में निगमन बोधक "तस्मात्" पद का प्रयोग किया गया है परन्तु 'हेतु साध्यवत्तया पक्ष प्रतिपादकं वचनं निगमनम्' के अनुसार निगमन में उपसंहार करना चाहिये था। बिना इसके निगमन असमर्थ है।

३।२५=समीक्षा–श्लोक ३।२३ में श्रुति को श्रीराम की पत्नी एतावता 'श्लोक ३।२४ में श्रुति को माता तथा इस श्लोक ३।२५ में श्रुति को माता एवं प्रमाण त्रय (प्रत्यक्ष तथा वेदानुवचन) को बन्धु कहा गया है। इस प्रकार यह द्विकोट्या वगाही ज्ञान श्रुति माता है कि बन्धु इसका अनिश्चय होने से भ्रान्त है। पुनः श्रीराम पत्नी होने के कारण माता कहा गया है, परन्तु बन्धु किस सम्बन्ध से है यह नहीं कहा गया है। पुनः वेद में सभों का अधिकार ये मानते ही नहीं हैं। तब यह कैसे सभों की माता एवं बन्धु हो सकती है? इस प्रश्न का उत्तर लेखक को देना था

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

४।५ समीक्षा—वेद वाक्य (वचन) है और श्रीसीतारामजी को वेदवेद्य कहा गया है इस प्रकार वचन वेद्य मानने पर अनिर्वचनीय कैसे कहा जा सकता है ? और जब अनिर्वचनीय कहते हैं तो वचनवेद्य कैसे कहते हैं ? इस प्रकार परस्पर विरोध होने से इस श्लोक द्वारा वचन वेद्य वचनीय मानना ही सिद्ध होता है अनिर्वचनीय नहीं ।

४।८ लगता है पण्डितजी शास्त्र को तिलाञ्जलि देकर "परम्परातंत्र न सिर पर कोई' की टोपी पहन कर अपने वाक्य को ही प्रमाण मानने का जगद्गुरुत्व करना चाहते हैं किसी भी धर्म और सम्प्रदाय में साधक को जप करने का नियम होता है सनातन धर्म में भी मन्त्र जप के नियम है भगवान ने कहा है "यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः । न स सिद्धि मवाप्नोति न सुखं न परां गतिम् ॥ तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्य व्यवस्थितौ । ज्ञात्वा शास्त्रविधानोक्तं कर्मकर्तु मिहार्हसि । शास्त्राज्ञा के अन्यूनानतिरिक्त यथा शास्त्राज्ञा ही कर्म करने से सफल होता है "चोदना लक्षणोर्थो धर्मः" परन्तु पण्डितजी तो "यस्यां कस्यां परिस्थितौ" लिखकर महामूर्ख वैद्यराज जन्तुकेतु की चिकित्सा पद्धति "यस्य कस्य तरोर्मूलं येन केनापि पेषयेत् । यस्मै कस्मै प्रदातव्यम यद्वा तद्वा भविष्यति ॥ का अनुशरण किया है और क्या पण्डितजी वैद्यराज जन्तु केतुके मित्र पण्डित फुंकट मिश्र के इस पाण्डित्य "गुरोर्गिरः पञ्चदिनान्युपास्य वेदाञ्च शास्त्राणि दिनत्रयं च । अर्धीसमाघ्रात वितर्कपादाः समागताः फुंकट मिश्रपादाः ॥ का द्योतन नहीं कर रहें हैं ? पण्डितजी का उपरोक्त कथन सर्वथा शास्त्र और हमारे आचार्योपदेश के विरुद्ध अनादरणीय है ।

४।१३—समीक्षा=यह कल्पना भ्रान्त एवं श्रीरामानन्द सम्प्रदाय के परम्परागत मान्य सिद्धान्त एवं व्यवहारों के विरुद्ध है श्री

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

रामानन्दाचार्यजी को परमगुरु कहने का अर्थ होगा आदि जो सम्प्रदाय का घातक है—इसी प्रकार परमेष्ठि (ब्रह्मा) हमारे सम्प्रदाय का घातक है—इसी प्रकार परमेष्ठि (ब्रह्मा) हमारे सम्प्रदायमें श्रीहनुमानजी के शिष्य हैं श्रीसीताजी परमेष्ठि गुरु नहीं है, उपरोक्त निरूपण और व्यवस्था सत्य विरुद्ध और मनगढन्त है ।

४।१८=समीक्षा—इस एक श्लोक में श्रीरामभद्रदासजी ने श्रीरामानन्दाचार्यजी द्वारा उपदिष्ट "श्रीवैष्णवमताब्जभास्कर" के श्री सुरसुरानन्दाचार्यजी के नवम प्रश्न (कालक्षेपः किमाप्यम्) एवं दशम प्रश्न (कुत्रकार्यो निवासः) के उत्तर—

प्रातर्मध्याह्नसायं कृतसूचि कृतिभिः राममभ्यर्च्य सम्यक्
श्रीमद्रामायणेन प्रतिदिनमखिलैर्भारतेन प्रपन्नैः ।
शक्तैरानन्दभाष्यैरथ च शुभतमाचार्य दिव्य प्रबन्धैः
कालक्षेपो विधेयः सुविजितकरणैः स्वाकृतेर्यावदन्तम ।।
रामस्य साङ्गस्य सपार्षदस्य सीता समेतस्य सहानुजस्य ।
कैंकर्यमीप्सा रहितः प्रकुर्वन् क्षिपेत्स्वकालं सततं सुभक्तः ।।

तथा

महामते प्रोच्य तदीचमार्ष्यं तेषां निवासस्तु निरूप्यतेऽथ ।
मोक्षप्रदः शास्त्रसुसंमतश्च जिज्ञासुबोध्यो भव सावधानः ।।
अशेषतीर्थेषु वसेत् प्रपूजयन् स यत्र यत्राविरभूद् यथा यथा ।
तथा तथा तत्र रघूत्तमं जगत्पतिं चतुर्वर्ग फलप्रदं हरिम् ।।

का खण्डन करने का दुष्प्रयास भी किया है जगद्गुरु श्री रामानन्दाचार्यजीने न केवल अयोध्या चित्रकूट आदि तीर्थ स्थानोंमें ही निवास करनेका उपदेश किया है अपितु—"तत्राप्यशक्तास्तुकुटीरमात्रं विधाय कुर्युस्वथराघवद्रौ । अन्यत्र वासं च गुरूपदिष्टान्मन्त्राञ्जपन्तो ह्यभिमानशून्याः" का भी उपदेश है परन्तु उनके विपरीत श्रीरामभद्रदासजी केवल अयोध्या चित्रकूटादि में ही निवास करनेका फर्मान जारी कर रहे हैं, जो अनावश्यक और अव्यवहारिक तथा

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

शास्त्र विरुद्ध है। शास्त्रानुसार सभी तीर्थ में वास करने के अधिकारी नहीं हैं, क्योंकि—'अन्यक्षेत्रे कृतं पापं पुण्यक्षेत्रे विनश्यति। पुण्यक्षेत्रे कृतं पापं वज्रलेपो भविष्यति॥ स्क० रेवा० ८।६९॥, वस्तुतः गुरु समीप वास का सर्वोपरि महात्म्य है—दिवा प्रकाशकः सूर्यः, शशी रात्रौ प्रकाशकः। गृहे प्रकाशको दीपस्तमोनाशकरः सदा। रात्रौ दिवागृहस्यान्ते गुरुः शिष्यं सदैव हि। अज्ञानाख्यं तमस्तस्य गुरुः सर्वं प्रणाशयेत्॥ तस्माद् गुरुः परं तीर्थं शिष्याणामवनीपते॥पद्म० पुरा० भूमिखण्ड ८५।१२-१३॥ अतः शास्त्रों में शिष्यों को गुरु स्थान में रहकर साधना का उपदेश दिया है—'तद्विज्ञानार्थं स गुरुमेवाभिगच्छेत् समित्पाणिः श्रोत्रियं ब्रह्म निष्ठम्॥मु० १।२।१२॥ अतः श्रीरामभद्रदासजी की उक्त व्यवस्था हास्यास्पद है। इसी प्रकार कालक्षेप के सम्बन्ध में केवल स्मरन् और ध्यायन् ही इस सम्प्रदाय को इष्ट नहीं है, अपितु त्रिकाल सन्ध्या, ब्र.सू. गीता-उपनिषदों के आनन्द भाष्य, महाभारत, श्रीमद्रामायण आदि का अध्ययन, श्रीरामनाम संकीर्तन, कथा श्रवण, अर्चन और सेवा आदि अभीष्ट है। श्रीरामभद्रदासजी की अव्याप्त व्यवस्था श्रीरामानन्द सम्प्रदाय विरुद्ध है और इन्होंने अपनी टिसटिसाती चिराग से भास्कर (श्री.चैम.भा.) को मन्द करने का हास्यास्पद दुःप्रयास किया है। इनका दुराग्रह है गीतादिभाष्य ही उपलब्ध नहीं है। इसके उद्देश्य से इन्होंने गीतादिभाष्यों के अध्ययन के आचार्योपदेश को यहां उड़ा देने का दुःप्रयत्न किया है। दर्शनाक्षम होने पर भी श्रवणाक्षम तो नहीं होंगे पीछले तीने क दशकों से प्रस्थानत्रय भाष्यों का विविध विश्वविद्यालयों में अध्ययनाध्यापन होता आ रहा है। अनेक छात्र शास्त्री आचार्य विद्यावारिधि प्रभृति उपाधि प्राप्त कर अनेक संस्थाओं में सेवा रत हैं तो इसे क्या कहा जाय "नैपस्थाणोरपराधोयदेनमन्धा नपश्यति"

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

४।१९=प्रतिष्ठा सर्वदेवानां निष्ठा सीतापतेः पदे । इत्येव रीतिमातिष्ठेद् रामानन्दीय वैष्णवः ॥" लिखा है ।

समीक्षा–परन्तु यह कथन भ्रान्त एवं श्रीवै.म.भा. "कैंकर्यमीर्ष्यारहित प्रकुर्वन्" तथाभियुक्त "द्वेष्य बुद्धिस्तु हेयैव देवेष्वन्येषु सन्ततम् । तथा स्वस्यैव हानिः स्याद्द्वेषशील भृवेन्मनः ॥ के भी विपरीत है । आचार्य चरण ने अन्य देवों से ईर्ष्या करने का निषेध मात्र किया है उनमें निष्ठा या प्रतिष्ठा करने की बात नहीं । आचार्यका वाक्य निषेध वाक्य है विधिवाक्य नहीं । परन्तु श्रीरामभद्रदासजी का वाक्य विधि वाक्य है और आचार्य विरुद्ध है । यह भगवद्वाक्य–कामैस्तैस्तैर्हृत तज्ञानः प्रपद्यन्तेऽन्य देवताः । तं तं नियममास्थाय प्रकृत्या नियताः स्वयाः । यो यो यां यां तनुं भक्तः श्रद्धयार्चितुमिच्छति । तस्य तस्याचलां श्रद्धां तामेव विदधाम्यहम् । स तया श्रद्धया युक्तस्तस्याराधनमीहते । लभते च ततः कामान्मयैव विहितान्हि तान् ॥ अन्तवतु फलं तेषां तद्भवत्यल्पमेधसाम् । देवान्देवयजो यान्ति मद्भक्ता यान्ति मामपि ॥ के भी विपरीत है । श्रीरामभद्रदासजीने यह श्लोक ज.गु श्रीरामानन्दाचार्यजी के श्रीवै.म.भा, के विरुद्ध लिखकर भास्कर का खण्डन करने का हास्यास्पद प्रयाश किया है ।

४।२०=समीक्षा— इस श्लोक के पूर्व तीन चरण तो इस संप्रदाय के सिद्धान्त हैं । परन्तु चतुर्थ चरण 'रामात् प्राक् पूजयेत् ततः" सिद्धान्त नहीं हैं यह स्वैच्छिक क्रिया हो सकती है किन्तु अनिवार्य नियम नहीं ।

४।२१="यद् यद् भुञ्जित तत्सर्वं राघवाय निवेद्य ही ।' कहा गया है ।

समीक्षा–यहां जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्यजीका तात्पर्य केवल 'रामस्य' ही नहीं अपितु 'रामस्य साङ्गस्य सपार्षदस्य सीतासमेतस्य सहानुजस्य' से है । अतः श्रीराम को निवेदित करने के बाद श्री

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सीताजी, फिर उनके अनुगअङ्ग पार्षदादिकोंको भी निवेदित करना अपेक्षित है । पण्डितजी को यह स्पष्ट करना आवश्यक था ।

४।२२=समीक्षा–इस श्लोकमें "नेच्छसि' के स्थानपर यदि 'न शक्नुं' शब्द योजना की जाये तभी यह श्लोक सत्य सिद्ध होगा, अन्यथा 'नेच्छसि' का कथन तो सर्वथा विपरीत है । श्री रामभक्तों एवं श्रीरामानन्दीय वैष्णवों को तो कलि खोज–खोज-कर हैरान करता है और नष्ट करता है । दृष्टान्त अनगिनत देखे जारहें हैं । पं० रामभद्राचार्यजी को भी कलिमहाराज ही नष्ट करने की इच्छा से जगद्गुरु बनने का भूत सिर पर चढा कर उनके द्वारा उनको तथा सम्प्रदाय को नष्ट कराने की लीला कर रहें हैं यद्यपि वे श्लोक ४।२५ में "करालकलितः परिपाहि पापात्" कह रहें हैं ।

४।२३=समीक्षा–परन्तु न तो सम्पूर्ण मानसको स्मरण रखने वालों में मानस रोग का अभाव देखा जाता है और न मानस में ही ऐसा कहा गया है । प्रत्युत मानस में तो कहा गया है–"राम कृपा नाशहिं सब रोगा । जौं एहि भांति बनै संयोगा ॥ सद्गुरु बैद बचन बिस्वासा । संयम यह न बिषय कै आशा ॥ रघुपति भगति सजीवन मूरी । अनूपान श्रद्धा मति पूरी ॥ एहि बिधि भलेहिं सो रोग नशाहीं । नाहिंत यतन कोटि नहीं जाहीं ॥ जानिअ तब मन बिरुज गोसाईं । जब उर बल बिराग अधि-काई ॥ सुमति सुधा बाढइ नित नई । बिषय आश दुर्बलता गई ॥ बिमल ज्ञान जल जब सो नहाई । तब रह राम भगति उर छाई ॥"

४।२४=समीक्षा—यह न तो श्रीरामानन्द सिद्धान्त चन्द्रिका है और न निर्मला ही है । यह वस्तुतः श्रीरामभद्राचार्य सिद्धान्त चन्द्रिका है और सुदुषिता है इसको श्रीरामानन्दसिद्धान्त चंद्रिकेयं सुनिर्मला' कहना झूठ है और पाखण्ड है जो सम्पूर्ण पुस्तक समीक्षा से पदे–पदे स्पष्ट है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अनिर्वचनीयाद्वैतवाद

ले० पं. धनेशझा, व्याकरण, साहित्याचार्य
प्रधानाचार्य, श्रीगोवर्धन संस्कृत महाविद्यालय, खड्गदा
जि० डूंगरपुर (राज०)

इस संसार में सभी प्राणियों की निरन्तर यही अभिलाषा रहती है कि मुझे शाश्वत सुख की उपलब्धि हो, दुःख भोगने का अवसर कभी भी नहीं हो। कोई भी विवेकशील मानव थोडा सुख पालेने पर सन्तुष्ट नहीं होता है, अपितु सभी लोग अधिकाधिक सुख की आकांक्षा करते हैं, जब तक जीवात्मा अनन्त सुख को उपलब्ध नहीं कर लेता है तब तक निरवधि सुख की चाह में अविरत-प्रयत्नशील रहता है। इसी बात को छान्दोग्य श्रुति कहती है कि "यो वै भूमा तत् सुखम्, नाल्पे सुख मस्ति भूमैव सुखम्, भूमात्वेव विजिज्ञासितव्यः।" इस स्थिति में परमेश्वर का साक्षात्कार होना ही आत्यन्तिक सुख है। यही जीवात्मा का परम लक्ष्य है तथा मानव देह धारण करने का सर्वोत्तम फल है। उसी को सभी भारतीय वैदिक दर्शन-मुक्ति, मोक्ष अपवर्ग कैवल्य निःश्रेयस, निर्वाण और परम पुरुषार्थ आदि शब्दों से व्यवहार करते हैं। इसीको भगवती श्रुति कहती है "तमेव विदित्वाऽति मृत्यु मेति नान्यः पन्थाः विद्यते ऽयनाय" गीता में भी कहा है—

यं लब्ध्वा चापरं लाभं मन्यते नाधिकं ततः ।
यस्मिन् स्थितो न दुःखेन गुरुणापि विचाल्यते ॥

जीवात्मा को जिसे प्राप्त कर लेने पर उससे बढकर दूसरा किसी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

तरह का लाभ सम्भव नहीं है । जिस मोक्षावस्था में स्थित होने पर प्राणी महान् से महान् दु:ख से भी विचलित नहीं हो सकता है । उक्त भारतीय दार्शनिक की अनुपम खोज मोक्ष को उपलब्ध करनेके लिये अनेक दार्शनिक विद्याये हैं, जिन्हें सम्प्रदाय शब्द से अभिहित किया गया है । जैसे एक ही निश्चित स्थान पर पहुंचने के लिये अनेक मार्ग होते हैं, जिसे जो मार्ग अभ्यस्त एवं परिचित होता है, वह मार्ग उत्तम और सरल प्रतीत होता है, उसी तरह सभी दर्शनों का निरवधि स्वरूप मोक्ष ही लक्ष्य है । उनके सम्प्रदाय अलग अलग हैं । इन सम्प्रदायों में कुछ वेद विरुद्ध सम्प्रदाय हैं, जैसे चार्वाक जैन बौद्ध वेदको प्रमाण स्वरूप में अङ्गीकार नहीं करते हैं, शेष भारतीय दार्शनिक वर्ग वेद को स्वीकार करते हुए भी सेश्वर निरीश्वर भेद से भिन्न धारणायें है, इनके सिद्धान्त में प्रमाणों संख्यायें अपने निर्धारित लक्ष्य की पूर्ति हेतु भिन्न भिन्न हैं । जैसे कि सांख्य और मीमांसा दर्शन ईश्वर की सत्ता को स्वीकार नहीं करते हैं, अद्वैत वेदान्ती शङ्कर मतानुयायी पारमार्थिक दशा में ईश्वर का अस्तित्व नहीं मानते हैं । वैशेषिक एवं नैयायिक ईश्वर की सत्ता तो मानते हैं किन्तु उसे साकार नहीं मानते। शेष वैष्णव सम्प्रदाय के अनुयायी ईश्वर को अनन्त कल्याण गुणों से सम्पन्न मानते हैं फिर भी कोई द्वैत, शुद्धाद्वैत द्वैताद्वैत विशिष्टाद्वैत भेद और भेदाभेद अचिन्त्य भेदाभेद आदि सिद्धान्त को स्वीकार करने एवं श्रीरामकृष्ण लक्ष्मीनारायण आदि इष्ट देवताओं एवं भिन्न भिन्न इष्ट मन्त्रों परम्पराओं तथा अवान्तर सिद्धान्त भेदों के कारण भिन्न भिन्न सम्प्रदाय में विभक्त वैष्णव सम्प्रदाय हैं । उपर्युक्त वैष्णव सम्प्रदायों में से श्रीरामानन्द सम्प्रदाय, श्रीरामानुज सम्प्रदाय विशिष्टाद्वैत वेदान्त सिद्धान्त को अङ्गीकार समान रूप से करते हैं, तथाऽपि इन सम्प्रदायों के सिद्धान्त

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

व्यवहार परम्परा परिपाटी आदि में अवान्तर अत्यधिक भेद विद्यमान हैं, जिन्हें विद्वत्समवाय एवं तत्तत् सम्प्रदाय के विशेषज्ञ सन्त समुदाय अच्छी तरह जानते हैं। साधारण रूप से भक्तगण भली भांति सुपरिचित हैं।

प्रकृत श्रीसम्प्रदाय श्रीरामानन्दसम्प्रदाय विशिष्टाद्वैतवादी सम्प्रदाय है। जिसका सर्वेश्वर मर्यादापुरुषोत्तम भगवान् श्रीरामचन्द्रजी एवं तदभिन्न स्वरूपा श्रीसीताजी स्वयं प्रवर्तक हैं। आगे चलकर श्रीपुरुषोत्तमाचार्य बोधायन, जो इस सम्प्रदाय के नववें आचार्य थे, उनके द्वारा ब्रह्मसूत्र पर विशिष्टाद्वैत परिचायकवृत्ति की रचनासे यह सम्प्रदाय अधिक गतिशील हुआ। आगे चलकर १३५६ में "रामानन्दः स्वयं रामः प्रादुर्भूतो महीतले" के सिद्धान्तानुसार भगवान् श्री राम के अवतार श्री जगदाचार्य श्रीरामानन्दाचार्यजी के करकमलों से प्रस्थानत्रय (ब्रह्मसूत्र गीता एवं प्रमुख उपनिषदों) पर सुललित आनन्दभाष्य की रचना एवं प्रचार प्रसारके कारण संसार में श्रीरामानन्द सम्प्रदाय के स्वरूप में विख्यात हुआ। आनन्दभाष्यकार जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्यजी इस सम्प्रदाय के २२ वें आचार्य हुए। भगवान् श्रीरामसे आरम्भकर आज तक इस सम्प्रदायकी परम्परामें लगभग ४० या ४१ पीढ़ी बीत चुकी है। जिसमें आचार्यों के द्वारा हजारों तात्विक ग्रन्थों की रचना की गयी है। जिससे श्रीरामानन्द सम्प्रदायका सिद्धान्त एवं विचारधारा विशुद्ध सुस्पष्ट एवं परिमार्जित विशिष्टाद्वैत श्रीवैष्णवसिद्धान्त के स्वरूप में विद्वानों एवं समाज के समक्ष विद्यमान है। जिसे समस्त विवेकशील विद्वान् सुचारु रूप से जानते हैं। भगवान् श्रीरामानन्दाचार्यजी द्वारा विरचित श्रीवैष्णवमताब्ज भास्कर के अनुसार विशिष्टाद्वैत का तात्पर्य है कि–ब्रह्म शेषी है, जीव शेष है, इनका परस्पर शेष शेषिभाव आदि अनेक सम्बन्ध हैं। अचित्(जड)तत्त्व माया भी ब्रह्म का शेष है। उसका भी वही सम्बन्ध है। चित् अचित् विशिष्ट ब्रह्म नित्य पदार्थ हैं। विशेष्य और विशेषण का नित्य

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सम्बन्ध है। विभव-व्यूहलीला अर्चा आदि अवतार भेद से भिन्न होते हुए भी वास्तविक में इन में भेद नहीं है। चराचर में सर्व व्यापक रूप में रमण करने के कारण ब्रह्म को ही "राम" शब्द से कहा जाता है। ब्रह्म जीव एवं अचित् जड पदार्थों की सत्ता स्वीकार करने के कारण ही इसे विशिष्टाद्वैत सिद्धान्त कहा जाता है। जो सम्प्रदाय के अनन्त ग्रन्थोंके द्वारा प्रमाणित व्यवहृत तथा सन्देह रहित है। मिथ्या भूत पदार्थों की विभिन्न दर्शनों में अख्याति, असत् ख्याति, अन्यथा ख्याति अनिर्वचनीय ख्यातिके रूपमें अन्य दार्शनिक मानते हैं। लेकिन आचार्य प्रवर श्रीरामानन्दाचार्यजी तो सत्ख्यातिवादी विशिष्टाद्वैत सिद्धान्त सुस्थापित किये हैं। जिसे असन्दिग्ध रूप से सभी आस्तिक विद्वान् जानते हैं। कुछ दिनों या महीनों से पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से एक नया अजनबी सिद्धान्त देखने में आया है पुच्छ विषाण विहीन सिद्धान्त विचार करने पर प्रतीत होता है। जिसे अनिर्वचनीयाद्वैत सिद्धान्त श्रीरामानन्दाचार्यजी का है। इस तरह प्रतिपादन करने वाले चित्रकूटस्थ पं० रामभद्रदासजी हैं। जो भी वर्तमानमें वेदान्त विषयक ग्रन्थ संसारमें उपलब्ध हैं उनमें अनिर्वचनीयाद्वैत नाम का कोई सम्प्रदाय नहीं मिलता, अनिर्वचनीय, अद्वैत दर्शन में विशेष रूप से माया के सम्बन्ध में चर्चा है। किन्तु अद्वैत से सम्बद्ध नहीं है। चैतन्य महाप्रभु के सम्प्रदाय में अचिन्त्य शब्द जुडा है किन्तु उसके साथ भेदाभेद है उसका अचिन्त्य अर्थ करने पर भी तारतम्य नहीं बनता है। इस तरह निर्मूल कपोल कल्पित सिद्धान्त के साथ श्रीरामानन्दाचार्यजी को जोडने में क्या हेतु, यह स्पष्ट नहीं होता है। क्या भानुमती का पिटारा समाज को दिखाना चाहते हैं जो-कहां का ईंट कहां का रोडा, भानुमती ने कुनबा जोडा। या विद्वान् होकर किसी पर रोष के कारण-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

विश्वामित्री सृष्टि करना चाहते हैं। या किसी वर्ग विशेष के साथ द्वेष होने से एक अड़ंगा खडा करना चाहते हैं। जो निर्मूल कपोल कल्पित सम्प्रदाय या सिद्धान्त की कल्पना या सज्ञ वागजाल जनता को दिखाकर दिग्भ्रमित कर अपना उल्लू सीधा करने या महत्वाकांक्षी पद को पाने की चेष्टा है। यह सुस्पष्ट नहीं है। जो भी हो अपने नाम के साथ श्रीवैष्णव जोड कर अपने सम्प्रदाय के मूल सिद्धान्त से सामान्य जनता को भटकाने की कुचेष्टा प्रशंनीय नहीं है। इसे सभी विज्ञजन अनुभव करते हैं।

"न बुद्धिभेदं जनयेदज्ञानां कर्म सङ्गिनाम।
जोषयेत् सर्वकर्माणि विद्वान् युक्तः समाचरन्"

इत्यलम् साधुषु।

卐 卐
卐

卐 अनिर्वचनीयाद्वैतब्रह्म 卐

卐 एक शास्त्रीय दृष्टि में 卐

ले०–मुरलीधर पाण्डेय, रामानन्दवेदान्ताचार्य
डाईरेक्टर शाङ्करवेदान्त कोश प्रोजेक्ट,
संस्कृतविश्वविद्यालय वाराणसी–२
(बी. २।४७, तुलसीघाट, वाराणसी–१)

इस वर्ष उज्जयिनी कुम्भ में मैं सपरिवार गया था। वहां जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य पीठ–अहमदाबाद–७ शिविर में ही आशन था जहां सभी प्रकार की आधुनिक व प्राचीन परिपाटी की समुचित व्यवस्था उपलब्ध थी। एक दिन जगद्गुरु श्रीरामा-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

रामानन्दाचार्य अनन्तश्री स्वामी रामेश्वरानन्दाचार्यजी के स्वाध्याय प्रवचन काल में श्रवण दर्शनार्थ समुपस्थित जनसमूह में मैं भी था चर्चा प्रसंग में महाराज श्री ने मुझ से कहा कि पण्डीतजी आप बहुशास्त्रविद् एवं बहुश्रुत हैं, आप-अनिर्वचनीया द्वैत ब्रह्म विषयपर कुछ कहिये। यह विषय सुनकर मैं कुछ सोचने लगा। तबतक आचार्यजीने एक पुस्तक दी। जिसमें ये पंतियां मुद्रित थी-"समस्त श्रुतियोंने ब्रह्मको अनिर्वचनीय कहकर अद्वैत माना है और उसीके आधारपर अपने वादको प्रतिष्ठित किया है"-यह पंक्ति श्रीरामानन्द सम्प्रदायीय कहलाने वाले एक विद्वान् की है। अनिर्वचनीय तत्त्व है, अद्वैत तत्त्व है और ब्रह्म तत्त्व भी है। पर तीनों को एकत्र करके विशेषण विशेष्य रूप में प्रयोग करना शास्त्र सम्मत नहीं है। यतः उक्त वाक्य का अर्थ यह होगा कि अनिर्वचनीय तथा अद्वैत स्वरूप ब्रह्म है। अथवा यह अर्थ होगा कि अनिर्वचनीय रूप जो अद्वैत तत्त्व वह ब्रह्म है। इन दोनों अर्थों में एकवार अनिर्वचनीय तत्त्व ब्रह्म का विशेषण हो रहा है और एकवार अद्वैत का विशेषण हो रहा है। ये दोनों स्थितियां शास्त्र सम्मत नहीं है। यतः ब्रह्मवादी किसी भी सम्प्रदाय में ब्रह्म को अनिर्वचनीय नहीं माना गया है इसी प्रकार अद्वैत को भी अनिर्वचनीय नहीं कह सकते। अद्वैत पद का निर्वचन तथा अर्थ तो सर्वत्र प्रसिद्ध हैं-द्वाभ्याम् इतम्-द्वीतम् उससे भाव अर्थ में या स्वार्थ में अण् प्रत्यय होकर द्वैतम् बनेगा और न द्वैतम् अद्वैतम्। अर्थात् जिसको दो प्रकारों से या दो रूपोंसे न जानजाय वह अद्वैत है। यह एकम् एव अद्वितीयं ब्रह्म है अथवा सद् एवं इदम् अग्रे सोम्य आसीत् है। यहां इस समय वह ब्रह्म निर्विशेष अद्वितीय है या सविशेष अद्वितीय है यह चर्चा छोड दी जारही है। इस प्रकार यह अनिर्वचनीय विशेषण न तो ब्रह्म में घट रहा है और न तो अद्वैत में ही घट रहा है। अतः अनिर्वचनीया द्वैत ब्रह्म है इस वाक्य का अर्थ शास्त्रों के द्वारा या शास्त्रीय पद्धति के द्वारा बोध गम्य नहीं है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अनिर्वाच्य शब्द का यह अर्थ करना कि निःशेषेण वस्तु-मनर्हम् अथवा अशक्यम् अनिर्वाच्यप् अर्थात् जिसका निःशेषरूप से निरूपण न किया जासके वह अनिर्वाच्य और उस ब्रह्म का निरूपण हम निःशेष रूप से नहीं कर सकते क्योंकि ब्रह्म अणु तो अणीयान् महतो महीयान्—वह छोटे से भी छोटा तथा बडे से भी बडा है, वह समीप से भी अधिक समीप में है—और दूर से भी अधिक दूर में है— इसलिए अनिर्वचनीय है तो यह कहना ठीक नहीं है। क्योंकि यहां तो इन्हीं वाक्यों से ही ब्रह्म का निर्वचन हो गया। वह ब्रह्म छोटे से भी छोटा है और बडे से भी बडा है, वह दूर में भी है और पास में भी। अर्थात् सर्वत्र व्याप्त होनेसे सब कुछ है। ये बातें बडे विस्तारके साथ माण्डूक्योपनिषद् में इस प्रकार कही गयी है—"नान्तः प्रज्ञं न बहिष्प्रज्ञं नोभयतः प्रज्ञं न प्रज्ञानघनं न प्रज्ञं नाप्रज्ञम्। अदृष्टमव्यवहार्यमग्राह्यमलक्षणमचिन्त्यमव्यपदेश्यमेकात्म प्रत्ययसारं प्रपञ्चोपशमं शान्तं शिवमद्वैतं मन्यन्ते चतुर्थं स आत्मा स विज्ञेयः" (मा० उप० ७ मन्त्र)

वह अन्तःप्रज्ञ नहीं है बहि प्रज्ञ भी नहीं है उभय प्रज्ञ भी नहीं है। वह अदृश्य है अग्राह्य और अव्यवहार्य आदि है पर आत्मप्रत्ययसार है अद्वैत है और वही सर्वानुभूतिगम्य आत्मा है। अग्राह्य और अलक्षण आदि सब कुछ होने पर भी वह आत्मप्रत्यय सार है। किन्तु अनिर्वाचनीय नहीं है। आत्मा अथवा परमात्मा ब्रह्म के विषय में इस तरह के वाक्य ईशोप-निषद्, कठोपनिषद्, छान्दोग्योपनिषद्, बृहदारण्यकोपनिषद् तथा गीता आदि में बहुश प्राप्त हैं।

वस्तुतः दर्शन क्षेत्र में अनिर्वाच्यशब्द शाङ्कर दर्शन तथा बौद्ध दर्शन का एक मुख्य विषय है। अनिर्वाच्य को कहीं त्रिकोटि-विनिर्मुक्त कहीं चतुष्कोटि विनिर्मुक्त माना गया है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

साक्षात्कार

अखिल भारतीय श्रीरामानन्द संघ के अध्यक्ष डा० श्रीमहन्त अयोध्यादासजी महाराज, बलरामकोटपुरी, दि० २४-१०-९२ को महामण्डलेश्वर स्वामी श्रीरामवतारदासजी (रत्न) प्रभृति कई सन्त आचार्यश्री के साक्षात्कारार्थ आचार्यपीठ में पधारे। प्रासंगिक चर्चा के बाद आनन्दभाष्यकार जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य सप्तशताब्दि महोत्सव के परिप्रेक्ष्य में आचार्य जयन्ती का आयोजन सम्बन्धि कई विचार विमर्श एवं अन्य साम्प्रदायिक विचार विमर्श किये।

वेदान्ताचार्य महान्त श्रीदेवनारायणदासजी उपासना आश्रम मोरवी, दि० ६-११-९२ को आचार्यश्रीके साक्षात्कारार्थ पधारे। आप आचार्यपीठ के स्नातक हैं। आप उदारचेता, समाज सेवी एवं संम्प्रदायनिष्ठ व्यक्ति हैं। उपासना आश्रम आपकी साधना स्थली आचार्यपीठ के आदर्शोंपर प्रगती पथ पर है। जहां आते जाते साधु-संतो, पण्डितों, अतिथी अभ्यागतों की विशिष्ट सेवा के साथ गौ सेवा एवं विद्याध्ययनरत छात्रों के लिये विशेष व्यवस्था है। आपने श्रीरामानन्द वेदान्ताचार्य परीक्षोत्तीर्ण छात्रों को प्रदान करने के लिए अपने श्रीगुरुदेव स्वामी श्रीशालीग्रामदासजी महाराज की स्मृति में पदक प्रदानार्थ एक सहस्र प्रदान किये। यों प्रति वर्ष श्रीरामानन्द वेदान्त पढने वाले छात्रों की सहायतार्थ एक सहस्र प्रदान किया करते हैं। आप आचार्यश्री के स्वाध्यायी सहपाठी व पुराने मित्र हैं। उनके आग्रह से आचार्य श्री आचार्यपीठ श्रीशेषमठ से वापस आते उपासना आश्रम पधारे

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

रात्रि निवास कर दूसरे दिन आचार्यपीठ के लिए प्रस्थित हुए। श्रीवेदान्तीजी के अथक पुरुषार्थ से आश्रम अल्पकाल में ही बहुत उन्नति कर गया है, जहां आधुनिक एवं प्राचिन दोनों संस्कृति का अवलोकन होता है।

दि० ८-११-९२ को डा. श्रीराधेश्यामधर द्विवेदी विभागाध्यक्ष सं.सं.वि.वि. वाराणसी, पं. श्रीचित्तनारायण पाठक प्राचार्य वाराणसी, डा. काशीनाथ तिवारी उपनिदेशक नई दिल्ली, प्रभृति कई विद्वान् आचार्यश्री के साक्षात्कारार्थ पधारे।

दि०-१०-९१-९२ को स्वामी श्रीहरिनारायणानन्दजी महामन्त्री भारतसाधुसमाज दिल्ली। श्रीमहन्त आरामजीदासजी रसायनी, दिल्ली महामण्डलेश्वर स्वामी .... परमार्थ आश्रम हरिद्वार। महामण्डलेश्वर श्रीरामावतारदासजी 'रत्न' मन्त्री भारत साधु समाज श्रीमहन्त शिवरामदासजी महाराज मन्त्री भारत साधु समाज प्रभृति कई विशिष्ट व्यक्ति आचार्यश्री के साक्षात्कारार्थ पधारे। आचार्य श्री के साथ प्रासंगिक चर्चा के अनन्तर सामाजिक, धार्मिक एवं साधु समाज सम्बन्धि अनेक महत्वपूर्ण चर्चायें हुई।

जिज्ञासा

जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्यजी कितने हैं ?

दि० ८-११-९२ को जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्यपीठ अहमदाबाद में जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य श्रीरामेश्वरानन्दाचार्यजी के साक्षात्कार हेतु डा० काशीनाथ तिवारी राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान नई दिल्ली पं० श्री प्रधानार्य आदर्श राष्ट्रीय संस्कृत विद्यालय बम्बई डा. श्रीराधेश्यामधर द्विवेदी सं.सं.वि.वि. तुलनात्मक विभागाध्यक्ष वाराणसी। पं० श्रीचित्तनारायण पाठक प्राचार्य निर्मल संस्कृत म० विद्यालय लोहुरीटोला वाराणसी प्रभृति विशिष्ट विद्वान् ११ बजे दिन में पधारे। प्रासंगीक चर्चा के बाद डा० श्रीराधेश्यामधर

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

द्विवेदीजी ने आचार्यश्री से प्रश्न किया कि जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्यजी कितने हैं ? आचार्यश्रीने स्पष्टीकरनार्थ पूछा क्यों ? पं० जी ने स्पष्ट किया कि पञ्चगंगाघाट वाराणसीस्थ पं० रामनरेशाचार्यजी कहते हैं कि " मैं ही एकमात्र आचार्य हूं" मुझे यह विदित हुआ कि आप...अन्य भी हैं । तो इसमें तथ्य क्या है । आचार्यश्री ने संक्षिप्त उत्तर दिया कि जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्यजी का आविर्भाव माघ कृष्णसप्तमि वि.सं. १३५६ में हुआ । साकेतगमन वि.सं. १५३२ श्रीरामनवमीको आचार्यश्री के अनन्त शिष्यों में से १२ प्रधान शिष्य अति प्रसिद्ध हैं । जिनमें से जगद्गुरु श्रीअनन्तानन्दाचार्यजी, ज. गु. श्रीनरहर्यानन्दाचार्यजी, ज. गु. श्रीसुरसुरानन्दाचार्यजी, ज.गु. श्रीभावानन्दाचार्यजी, ज. गु. श्रीपीपाचार्यजी, ज.गु. श्रीयोगानन्दाचार्यजी, ज. गु. श्रीरामकविराचार्यजी. ये आठ द्वारागादी के संस्थापक हुए । जिन्होंने पञ्चगंगाघाट से अतिरिक्त स्थलों में आचार्यपीठ की स्थापना की जो द्वारागादी या जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्यपीठ इस नाम से लोक में ख्यात हुये । इन्हीं द्वाराचार्यो के परंपरा में अन्य द्वाराचार्य हुये जो जगद्गुरु श्रीअनुभवानन्दाचार्यजी, ज. गु. श्रीहनुमदाचार्यजी, ज. गु. श्रीद्वन्दुरामाचार्यजी, ज. गु. श्रीवर्मचन्द्राचार्यजी, ज. गु. श्रीराघवेन्द्राचार्यजी, ज. गु. श्रीपरमानन्दाचार्यजी. ज. गु. श्रीविजयरामाचार्यजी, ज गु. श्रीराघवचेतनाचार्यजी, ज. गु. श्रीकालूरामाचार्यजी, ज. गु. श्रीसाकेतनिवासाचार्यजी, ज. गु. लाहारामाचार्यजी, ज. गु. श्रीरामरंगीदेवाचार्यजी, ज. गु. श्रीकीलदेवाचार्यजी, ज.गु. श्रीअग्रदेवाचार्यजी ज.गु. श्रीनाभाचार्यजी, ज.गु. श्रीजगीदेवाचार्यजी, ज.गु. श्री तनतुलसीदेवाचार्यजी, ज.गु. श्रीमुरारीदेवाचार्यजी, ज.गु. श्री मलूकदासजी, ज.गु, श्रीभङ्गीदेवाचाय जी, ज.गु श्रीरामरामाय-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

णीदेवाचार्यजी, ज.गु. श्रीदीवाकराचार्यजी, ज.गु. श्रीभगवन्नारायणाचार्यजी, ज.गु. श्रीहरीनारायणाचार्यजी, ज.गु. श्रीरामस्तम्भनाचार्यजी, ज.गु. श्रीलालतुरंगीदेवाचार्यजी प्रभृति कुल ३६ द्वाराचार्य हुये जो "जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य" जी की सम्माननीय उपाधीसे सम्मानित थे। जिनका समय १३६३ वि.स.से. १८५४ वि.स. तक फैला हुआ है। कतिपयों की परंपरा विच्छिन्न प्राप्य है। कितने ही परंपरा इनमें से अक्षुण्ण रूप से प्रवाहीत होती आरही है।

मध्य में शैव एवं वैष्णवों के आन्तरिक कलह के समन हेतु जगद्गुरु श्रीबालानन्दाचार्यजी (वि.सं. १७१० से १८०२) ने चतुःसम्प्रदायका व्यवस्थित संगठन कर अनि अखाडों की व्यवस्था की। तब से "जगद्गुरु श्री रामानन्दाचार्य" पद प्रतिष्ठित होनेवालेको श्रीरामानन्द सम्प्रदायके विद्वानों विशिष्ट सन्त महन्त श्रीमहन्त द्वाराचार्य खालसा प्रभृतिकी सम्मतिके साथ दिगम्बर अनि अखाडा निर्मोही अनिअखाडा निर्वाणी अनिअखाडों के श्रीमहान्तों की सम्मति अपेक्षित है। इसी सामान्य नियमानुसार मेरा(जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य स्वामीरामेश्वरानन्दाचार्यजी) दि० ३१।१।९० को विद्वानों सैंकडों विशिष्ट सन्त महान्त श्रीमहन्त द्वाराचार्य एवं तीनों अनियों के श्रीमहान्तों ने हजारों साधक जन समूहके मध्य में जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य पीठ विश्रामद्वारका श्रीशेषमठ शींगडा में अभिषेक कर "जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य" पद में प्रतिष्ठित किया।

"अथाम्नायः सम्प्रदायः" शास्त्रीय वचनानुसार हमारी अविच्छिन्न परम्परा निम्नानुसार है—

१ सर्वावतारी सर्वेश्वर श्रीरामजी (चैत्रशुक्ल श्रीरामनवमी)
२ सर्वेश्वरी श्रीसीताजी (वैशाख शुक्ल नवमी श्रीसीतानवमी)
३ श्रीहनुमान्जी (कार्तिककृष्ण १४ त्रेतायुग)

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

४ श्रीब्रह्माजी (अक्षयनवमी सत्ययुग)
५ श्रीवशिष्टजी (ऋषिपञ्चमी सत्ययुग)
६ श्रीपराशरजी (आश्विन शुक्ल १५ सत्ययुग)
७ श्रीव्यासजी (गुरुपूर्णिमा त्रेतायुग)
८ श्रीशुकदेवजी (श्रावण शुक्ल १५ द्वापरयुग)
९ श्रीपुरुषोत्तमाचार्यजी(बोधायन)(पौ.कृ१२वि.पूर्व५६९-३२०)
१० श्रीगंगाधराचार्यजी(माघकृष्ण११ विक्रमपूर्व ४८९-२८९)
११ श्रीसदानन्दाचार्यजी (माघ शुक्ल ५ विक्रमपूर्व ३३७-८०)
१२ श्रीरामेश्वरानन्दाचार्यजी (वैशाखशुक्ल ३ वि. ३६-२३६)
१३ श्रीद्वारानन्दाचार्यजी (फा. पूर्णिमा वि. स. १९६-३७६)
१४ श्रीदेवानन्दाचार्यजी (चै.शु. १० वि० सं ३२६—५२६)
१५ श्रीश्यामानन्दाचार्यजी (आ.शु. २ वि. सं. ४८६-६८६)
१६ श्रीश्रुतानन्दाचार्यजी (आ.शु. ७ वि. सं. ६३६-८३६)
१७ श्रीचिदानन्दाचार्यजी (चैत्रपूर्णिमा वि. सं ७४६-८९६)
१८ श्रीपूर्णानन्दाचार्यजी (वै.कृ. १३ वि.सं. ८६६—१०६७)
१९ श्रीअियानन्दाचार्यजी (वै.शु. ९ वि.स. १०२६-१२०६)
२० श्रीहर्यानन्दाचार्यजी(आ.शु. ११ वि.सं. ११५६-१३५६)
२१ श्रीराघवानन्दाचार्य (चै.शु. ११ वि.सं १२०६-१३९६)
२२ प्रस्थानत्रयानन्दभाष्यकार जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्यजी
(माघकृष्णसप्तमी १३५६-१५३२)
२३ ज.गु. श्रीभावानन्दाचार्यजी(वै.कृ.६वि.सं.१३७६-१५३९)
२४ जगुश्रीअनुभवानन्दाचार्यजी(मा शु.५.वि.सं.१५०३-१६११
२५ ज.गु.श्रीविरजानन्दाचार्यजी (श्राशु९विसं१५५०-१७७५)
२६ ज.गुश्रीआशारामाचार्यजी (फा.शु. ११विसं१५६५-१७६८)
२७ ज.गु. श्रीरामभद्राचार्यजी (वै.पू.वि.सं १७३३-१७८९)
२८ ज.गु. श्रीरघुनाथाचार्यजी(श्रा.अ.वि.सं. १७५७-१८०७)
२९ ज.गु. विश्वम्भराचार्यजी (चै.कृ.३ वि.सं १७७७-१८२७)

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

३० ज.गु. श्रीराघवेन्द्राचार्यजी (चै.शु.५वि.सं१८०७-१८३८)
३१ ज.ज. श्रीवैदेहीवल्लभाचार्यजी (जन्मावि.सं१८११-१८७१)
३२ ज.गु. श्रीकोसलेन्द्राचार्यजी (रथसप्तमीवि.सं१८३५-१८८५)
३३ ज.गु. श्रीरामकिशोराचार्यजी(अन.का.वि.सं १८५१-१९११)
३४ ज.गु.श्रीजानकीनिवासाचार्यजी(मा.कृ.७.विसं १८५१-१९१५)
३५ ज.गु.श्रीलालकृतनिवासाचार्यजी(चै.शु.१विसं १८६७-१९३५
३६ ज.गु.श्रीजानकीजीवनाचार्यजी(ना.पं.वि.सं.१८७५-१९०२)
३७ ज.गु.श्रीभरताग्रजाचार्यजी (मा.अ.वि.सं- १८४८-१९२०)
३८ ज.गु. श्रीहनुमदाचार्यजी (अ.तृ.वि.सं. १९०७-१९७८)
३९ महामहोपाध्याय जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य श्रीरघुवराचार्य जी वेदान्तकेशरी (वि.सं. विजयादशमी १९४१-२००७)
४० जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य श्रीरामप्रपन्नाचार्यजी (वि.सं.चै.शु. नवमी १९४४-२०४६)
४१ आनन्दभाष्यसिंहासनासीन
जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य रामेश्वरानन्दाचार्यजी
(अक्षयतृतीया १९८८)

आपके कितने हैं,प्रश्नसे यों अवगत होता है कि और भी अनेक हैं पर ऊपर निर्दिष्ट सामान्य नियमानुसार कतिपय विशिष्ट सन्त महन्त श्रीमहन्त एवं तीनों अनियों के श्रीमहन्तों के द्वारा २६।१।८९ को प्रयाग कुंभ के अवसर पर "जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य" पदपर अभिषिक्त ज.गु श्रीहर्याचार्यजी हैं। अन्य व्यक्ति सम्प्रति उपर्युक्त नियमानुसार अभिषिक्त कोई नहीं यदि आपके कथनानुसार "श्रीचरणपादुका पञ्चगङ्गाघाट में रहता हूं अतः मैं ही [आचार्य हू" तो इससे तो यह भी बोध हो जायगा कि "जो जो श्रीचरणपादुका पञ्चगङ्गा घाट में निवास करें वह वह आचार्य कहलाये" तब तो वहां निवास करने वाले "परिचारक वर्ग भी आचार्य ही कहलायेंगे?

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पं. जी के सिंहस्थ उज्जैन में प्रकाशित पत्रिकाओं के समाचारों के प्रति आचार्य श्री का ध्यान आकृष्ट करने पर आचार्य जी का उत्तर था कि उन सभी पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित असम्बद्ध अनर्गल तथ्यहीन समाचारोंकी समीक्षा शास्त्रीय प्रमाणों से पुष्ट पीछले कई महिनों से जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्यपीठ पत्रिका में प्रकाशित होती आ रही है जो आपके यहां भी नियमित रूप से आरही है। खेद का विषय तो यही है कि यथा कथंचिद् आचार्य पद प्रतिष्ठित होने की महत्वाकांक्षा वाले सज्जन को इतना भी खयाल नहीं कि श्रीरामानन्द सम्प्रदाय का स्वरूप सात सौ वर्षोंसे ही है।(नईदुनिया इन्दौर, ६ मई९२)

वस्तुतः श्रीसम्प्रदाय—श्रीरामानन्द सम्प्रदाय का स्वरूप यों है "इममेव मनुं पूर्वं साकेतपतिर्मामवोचत। अहं हनुमते मम प्रियाय प्रियतराय। स वेद देदिने ब्रह्मणे स वशिष्ठाय स पराशराय। स व्यासाय स शुकाय। इत्येषोपनिद्" मैथिली महोपनिषद्—५ एवं "आद्यां शक्तिं महादेवीं श्रीसीतां जनकात्मजाम्। तारकं मन्त्रराजं तु श्रावयामास ईश्वरः। जानकी तु जगन्माता हनूमन्तं गुणगारकम्। श्रावयामास नूनं स ब्रह्माणं सुविधां परम्। तस्माल्लेभे वसिष्ठर्षिः क्रमादस्मादनात्मन्" श्री वद् वाल्मीकि संहिता २।३३ से ३५ इन उपरोक्त श्रुति एवं संहिता वाक्यों से अति स्पष्ट है कि श्रीसम्प्रदाय (श्रीरामानन्द सम्प्रदाय) अनादि या सृष्टि के आदि काल से प्रवर्तमान होता आरहा है। प्रस्थानत्रयानन्दभाष्यकार जजद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य जी इस सम्प्रदाय के मध्यवर्ति २२ वें आचार्य हैं आचार्यवर श्रीआनन्दभाष्यकारजी का अवतार काल अगस्त्य संहिता के अनुसार "खं नभो वेद वेद प्रमिते वर्षे गते कलौ"(१३२।७) अर्थात् कलियुगके चार हजार चार सौ वर्ष व्यतीत होनेपर तो—

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

"श्रीमद्विक्रमवत्सरेरसकपञ्चत्रीन्दुसंख्यान्विते
सच्छ्रीवैष्णवधर्मशुद्धविमलं वेदादि संवर्णितम्
ज्ञात्वाक्षीणमुपागवमसितके रामः स्वयं माघके
सप्तम्यां समवातरत्क्षितितले देवादिसंप्रार्थितः"

के अनुसार माघकृष्ण सप्तमी विक्रम संवत १३५६ तो सम्प्रति ६९२ वर्ष अतः उक्त कथन से किनना मेल खाता है। यह ध्यान देने की बात है कि "आचार्य लक्ष्मणैर्युक्तं वेदवेदान्त-पारगम। श्रीसम्प्रदाय श्रेष्ठञ्च जनोद्धार परं सदा" (१३२।१६) शुशीलः समदक्शान्तो दान्त श्रीमान् जगद्गुरुः। पुनः सत्सम्प्रदायस्य वर्त्तयिता मुनीश्वरः"(१३२।२४) श्लोकोंके अनुसन्धानसे यों अवगत होता है कि सर्वेश्वर श्रीरामाभिन्नस्वरूपा जगत् जननी सर्वेश्वरी श्रीसीताजीसे प्रवर्तित श्रीसम्प्रदायके ग्लानी प्रायः अवस्था में जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्यजी का अवतार हुआ। आचार्यश्री के द्वारा उस अनादि विशिष्ट धर्म का विशेष रूपसे प्रचारित एवं प्रसारित होने से आपश्री के ही नाम पर श्रीसम्प्रदाय श्रीरामानन्द सम्प्रदाय के नाम से विश्व विख्यात हुआ। जो आज का मानव श्रीरामानन्द सम्प्रदाय के नामसे जानता है तो इस अनादी सम्प्रदाय को कुछ वर्ष पूर्व का कहना युक्ति एवं शास्त्र संगत है या अपने बुद्धि वैभव का दिवालियापन ?

॥ सिंहावलोकन ॥

(ले.पं. महेन्द्रमणित्रिपाठी, एम.ए. गोरखपुर विश्वविद्यालय)

जगद्गुरु श्रीअनन्तानन्दाचार्यजी (काल-१३६३-१५४०)

"आनन्द भाष्यकारः श्रीरामानन्द जगद्गुरोः।
सिद्धान्त दीपकश्लोक-७

"आनन्दकृद्रामानन्दाचार्यं प्रणम्य च"
सद्विद्यार्थ निर्णय-श्लोक-२.

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

जगद्गुरु श्रीयोगानन्दाचार्यजी (१४५७–१५८३)
"रामं सर्वेश्वरं चाथानन्द भाष्य विधायकं"
भक्तित्रय निरूपण श्लोक–१
"नत्वा भाष्यकृतं रामानन्दाचार्य च राघवं"
भागवतानुशासनम् श्लोक–१
"श्रीआचरज आचरज जगद्गुरु वन्दौ रामानन्द
वन्दौ रामानन्द राम सब जगत विहारी
भाष्यकार भगवान विश्व तारक अवतारी" वैराग्यपचीसी-१
जगद्गुरु श्रीभावानन्दाचार्यजी (काल–१३७६–१५३९)
"रामानन्दं गुरुं नत्वा ह्यानन्द भाष्यकारकम्" शिक्षादशकम्"
"नत्वा रामं च श्रीरामानंदं भाष्य कृतं गुरुम्"भावनात्रयम्–१
जगद्गुरु श्रीमुरलीदेवाचार्यजी (काल १५७०–१६७७)
"प्रणमौ सीताराम नमि जगगुरु रामानन्द
प्रस्थान त्रय पर रुचिर जासु भाष्य आनन्द ॥
सद्विचारमाला–१
जगद्गुरु श्रीहनुमदाचार्यजी (काल १४५५–१५६१)
"आनन्दभाष्य कृद्रामानन्दं रामं तथेश्वरं" श्रीहनुमत्प्रभुस्तव-१
आनन्दभाष्य कृद्रामानन्दं रामं तथेश्वरम्"
श्रीहनुमत्स्तवः–१
जगद्गुरु श्रीतन तुलसीदासाचार्यजी (काल १५५५–१६५७)
"प्रणम्यभाष्यकृद्रामानन्दं रामं गुरुं तथा"धर्मशिक्षावली-१"
जगु श्रीकीलदेवाचार्यजी (काल १५१६–१६१७)
'नत्वाभाष्यकृतं रामानन्दं रामं गुरुं तथा"
साधनभक्ति दर्पण–श्लोक १
"नत्वाभाष्यकृतं रामानन्द्राचार्यं तथा गुरुम्"
अध्यासध्वंदासलेश—२
ज.गु. श्रीसुरसुरानन्दाचार्यजी (काल १३८५–१५११)
"प्रणम्य भाष्यकृद्रामानन्दाचार्यं च राघवम्"

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

श्रीरामानन्द भाष्यादि ग्रन्थानाम् पठनं तथा"
श्रीवैष्णव दिनचर्या श्लोक १ एवं ५

ज.गु. श्रीविजयरामाचार्यजी (काल १५१६–१६१६)
"नत्वाऽहं भाष्यकृद्रामानन्दं रामं गुरुं तथा"
श्रीराममहिम्नस्तव श्लोक १

आनन्दभाष्यकृद्रामानन्दं ब्रह्म च राघवम् ।
श्रीरामषडाक्षरस्तव-श्लोक १

"सिय रामहिं नमि नमौ भाष्यकार रामानन्दाचार्य"
श्रीविजयराम शिक्षावलि १

ज.गु. श्रीटीलाचार्यजी (काल १५१५—१६४२)
"आनन्दभाष्यकृद्रामानन्दाचार्यं यतीश्वरं ॥"
ब्रह्मपदशक्तिवाद–श्लोक ३

"प्रणम्य भाष्यकृद्रामानन्दं गुरुं च राघवम्"
"आचार्यं सार्वभौमेन रामानन्देन धीमता ।
वेदान्त दर्शनानन्द भाष्ये जीवास्त्रिधामता ॥
श्रीरामानन्द वेदान्तसार १ तथा ५५

ज.गु. श्रीकूबाचार्यजी (१५४५–१७२५)
"विमलभाष्यकरः सदनात्मजो भुवि सुभूय निपेध्यगुणत्युतम्"
श्रीरामाष्टकम् श्लोक ३

"रामनन्दः प्रकृति तनु भृद् ब्रह्म मन्तात्रिदण्डं
काषायं यः श्रुतितनु पटं धारयन् ब्रह्मसूत्रे ।
गीतायां वा उपनिषदि समे दिव्य आनन्द भाष्यम्
कुर्वन् भक्ति जयति भुवने तं स्तुवे संवितन्वन्
प्रबोधरत्नमाला—श्लो. २

ज.गु. जङ्गीदेवाचार्य (१५४९–१६१५)
"रामं च भाष्यकृद्रामानन्दाचार्यं च मारुतिम्"
श्रीमिथिलामङ्गल श्लोक १

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

"नत्वा गुरुं च रामं च भाष्यकृद् पुण्यसद्मजं"
विरोधिषट्क—श्लोक १
"सद्गुरु नमि आनन्द भाष्यकर वन्दौ रामानन्द"
शिक्षापचीसी—१
"जन कल्मष विध्वंश हेतु जिनको आनन्दभाष्यत्रयौ"
रामानन्द यतीश वर्य पद्मा ऊभोगरु छु विनयी"
श्रीरामगीता प्रकाश १

ज.गु. श्रीनरहर्यानन्दाचार्यजी (काल १४९१-१५९९)
आनन्दभाष्य कृद्रामानन्दाचार्यं नमाम्यहम्"
अनन्ततत्वामृत-१
"वन्दि जगद्गुरु रामानन्दा जो त्रय भाष्य रचे आनन्दा"
नामप्रताप १

ज.गु. कालूरामाचार्यजी (काल १६४०—१७४१)
"नमस्कृत्य गुरुं रामानन्दं भाष्यकृतं तथा ।
श्रीरामब्रह्माष्टक १
"नमि सद्गुरु अरु भाष्यकर रामानन्दाचार्य"
दोहा मालिका २

ज.गु. श्रीपूर्णविराठीदेवाचार्यजी (काल १६४०-१७४०)
"आनन्द भाष्यकर्त्तारं रामानन्दं च राघवम्"
श्रीवैष्णव मङ्गलम् १
"पूर्ण विराट्याचार्य की गीता भाष्य विचारि
यह पुरुषोत्तम योग की शिक्षा अति सुखकारि"
पुरुषोत्तम योग शिक्षा—२२

ज.गु. श्रीभृङ्गिदेवाचार्य (काल १५७५-१६७५)
आनन्दभाष्य कृद्रामानन्दाचार्यं गुरुं तथा ।"
सरयूमङ्गल —१
"नत्वा गुरुं च श्रीरामानन्दं भाष्यविधायकम्"
साधनदर्पण—१

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

"रामानन्दाचार्यं भाष्यकर नमि यति नायक"
शिक्षाष्टक—१

ज.गु. श्रीअनुभवानन्दाचार्यजी (काल १५०३—१६११)
"नत्वा गुरुं तथाऽऽनन्द भाष्यकारं जगद्गुरुम्"
श्रीगीतार्थसुधा—२

"रामं ब्रह्म तथाऽऽनन्दभाष्यकारं जगद्गुरुम्"
श्रीरामचन्द्रविंशति" १

"आनन्दभाष्यकृद्रामानन्दाचार्यं यतीश्वरं ॥
श्रौतार्थ संग्रहः—१

ज.गु. श्रीकर्मचन्द्राचार्यजी (काल १५००—१६००)
"रामानन्दं नमस्कृत्य भाष्यकृद् यमीनां पतिम् ॥
कर्मबन्ध विनाशक स्तम्ब ?
"नमि रामहि जेहि नमे से सिद्ध होत सब कार्य ॥
वन्दौ सोई भाष्यकर रामानन्दाचार्यं ॥
कर्मयोग विमर्श १

ज.गु. श्रीराघवचेतनाचार्यजी (काल १५५०—१६६०)
"पुण्य सद्मजमानन्द भाष्यकारं च राघवम्"
श्रीराघव शरणागति— १

ज.गु. दिवाकराचार्यजी काल (१५३५—१६१०)
"आनन्द भाष्यकृद्रामानन्दं रामं परेश्वरम् ॥
श्रीराम ब्रह्म स्तव—१

ज.गु.दुन्दुरामाचार्यजी (१७५४—१८५४)
"श्रीसुशील सुतं नत्वा भाष्यकारं तथा गुरुम्"
भक्तिनिरूपण—१
"गुरुं श्रीविरजानन्दं भाष्यकृत् पुण्य सद्मजम् ॥
श्रीरामस्तव—१

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

ज.गु. श्रीरामस्तम्भनाचार्यजी (काल१६०५–१७०५)
"प्रणम्य भाष्यकृद्रामानन्दं रामं गुरुंतथा"
शिक्षाचिन्तामणी–१

ज.गु. श्रीसुखानन्दाचार्यजी (काल १३७४–१४७४)
"नमस्कृत्य परं ब्रह्म सीतया सह राघवम् ।
आनन्दभाष्यकृद्रामानन्दाचार्यं समाश्रये ॥"
श्रुति सिद्धान्त दीपिका १

"वन्दि परात्पर ब्रह्म श्रीसीतापति रघुराज ।
वन्दौ रामानन्द गुरु भाष्यकार यतिराज ॥
शिक्षा बत्तिसी– १

ज.गु. श्रीलाहारामाचार्यजी (काल १५४५–१६५०)
"जगतः कारणं रामं सर्वेशं भुक्तिदं तथा ।
आनन्द भाष्य कर्त्तारं रामानन्दं समाश्रये ॥"
श्रीवैष्णव धर्म पियूष १

ज.गु. श्रीमङ्गलाचार्यजी (काल १७८५–१८९८)
"आनन्दभाष्यकर्त्तारमाचार्य चक्रवर्तिनम् ।
वन्दे यतीश्वरं रामानन्दाचार्यं जगद्गुरुम् ॥"
सगुण निर्गुण ब्रह्माभेदवादः–६

जगद्गुरु श्रीमधुराचार्यजी
आनन्दभाष्यकृद्रामानन्दाचार्यं प्रणम्य च ।
नमामि कीलदेवाख्यं द्वाराचार्यं तथा गुरुम् ॥
श्रीभगवदगुणदर्पण–२

वेदान्ती श्रीरामपदारथदासजी श्रीजानकीघाट अयोध्या ने आनन्दभाष्य के जिज्ञासाधिकरण का अनुवाद किया है जो रामानंद ग्रंथमाला वर्ष–१ अंक ५–६ में प्रकाशित है। श्रीरामनिष्ठ पं. श्रीवजरंगाचार्यजी "स्वसहस्रैः समाकान्तो गजो-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

गच्छति निर्भयः। धूर्त लक्ष्मीस्तथानन्दभाष्यमपिह निर्भयम्।" लिखते हैं एवं उनका "तिमिरभास्कर" "प्रश्नोत्तरमाला तथा प्रश्नावली" प्रभृति निबन्धों से श्रीमदानन्दभाष्य के विषय में कुचोद्य करने वालों के प्रति स डिं डिम नाद घोषणा किये पर उनकी घोषणा या प्रश्नावली का उत्तर करने का साहस किसी भी माई के लाल ने नहीं किया। अभिनव वाचस्पति पण्डित सम्राट् स्वामी श्रीरंगवैवाचार्यजी के "सिद्धान्त सिन्धु" "अर्थपंचक, मानरत्नावली, प्रमेयपरिशोधिनी, श्रीरामानन्द सिद्धान्तसार, श्रीवैष्णवालङ्कार भाष्य–श्रीआनन्दभाष्य की टीका प्रभृति आनन्दभाष्याधारित तात्विक पचासों ग्रन्थातिरिक्त "विजयी और अमर आनन्द भाष्य" निबन्ध विश्व में विजय पताका को फहरा रहा है–उन सभी तात्विक निबन्धों का पर्यालोचन किये बिना जगदाचार्य कृति के प्रति अंगुलि निर्देश करने के साहस करने वालों को दुस्साहसी "पण्डित मन्य" से अतिरिक्त क्या कहा जा सकता है। डा० श्रीमुरलीधर पाण्डेयजी "जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य प्रस्थानत्रयी आनन्दभाष्य" में आचार्य कृति आनन्दभाष्य का विवेचन करते हैं। पण्डितराज पं. श्रीरघुनाथशर्माजी भारतसरकार से पुरस्कृत वाराणसेय संस्कृत विश्व विद्यालय के वेदान्त विभागाध्यक्ष "वेदान्त दर्शने श्रीरामानन्द दर्शनम्" में प्रस्थानत्रयानन्दभाष्यों का विशेष विवेचन करते हैं। पण्डितराज पं.श्रीकेदारनाथ ओझाजी "विशिष्टाद्वैत मीमांसा" प्रबंध आनन्दभाष्याधारित लिखे हैं। डा० आचार्य श्रीकिशोरदास स्वामीजी "जगदगुरु श्रीरामानन्दाचार्य जी एक व्यक्तित्व" निबन्ध में आचार्य कृति प्रस्थान त्रयानन्दभाष्यों को उधृतकर आचार्य श्री के व्यक्तित्व को व्यक्त किये हैं। आपने ही "भारतीय दर्शन और मुक्तिमीमांसा" नामक महाप्रबन्ध के पृष्ठ २०८ से २१९ तक जगदगुरु श्रीके कृति आनन्दभाष्यों एवं उनके तात्विक स्वरूप का साटोप वर्णन किया है। पं. श्री श्रीवैद्यनाथमिश्रजी "गीतायाः ब्रह्मसूत्राणांसर्वोपनिषदां तथा। भाष्यं विनिर्मगे साक्षाद्रामरूपं नमामि तम्॥ (आचार्य कीर्ति-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

लता) लिखकर आचार्यश्री को नमन कर रहे हैं। जगद्विजयी महामहोपाध्या ज.गु. श्रीरामानानन्दाचार्य रघुवराचार्यजी "वेदान्त केसरी" जी ने ब्रह्मसूत्रानन्दभाष्य पर "भाष्यपदानुगा" टीका लिखी जिसका कुछ अंश सन्त पत्रिका जयपुर से प्रकाशित हुआ है। महामहोपाध्यायजी अन्यत्र लिखते हैं "नमस्तस्मै यतीशाय रामानन्दाय धीमते। भाष्यत्रिषांपतिर्यस्य मोहध्वान्त निवर्तकः ॥ श्रीरघुवरीयवृत्ति श्लोक-२"

सम्यगालोच्य गीताया भाष्यमानन्द संज्ञकम्।
कुर्वेऽर्थं चन्द्रिकातस्याष्टीकां तद् भाष्यसम्मताम् ॥
गीतार्थ चन्द्रिका श्लो-४।

"अज्ञानाम्बुधिमग्नमानव कृते वेदान्त सूत्रे व्यधान् मायिध्वान्त निराकरिष्णु विशदं स्वानन्दभाष्यं शुभम् येनार्येण कृतं समोपनिषदि प्रेम्णा च भाष्यं वृहद् रामानन्दयतिर्जगत्त्रयगुरुर्वोऽव्यात्सुरेन्द्रार्चितः ॥
जैनारण्यगजेन्द्र दारणपटुः कण्ठीरवो भीषणो
बौद्धानां बलहारको द्विजगणानान्धर्म संयोजकः
गीताभाष्य कृदेष दैशिकपतिर्योगीन्द्र चूडामणी,
रामानन्दयतिर्जगत्त्रयगुरुर्वोऽव्यात्सुरेन्द्रार्चितः ॥

प्रभृति अनेक दिव्य प्रबंधो में आचार्य श्री को प्रस्थानत्रयानन्द भाष्य कृत निरूपित कर रहें हैं। जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य श्रीरामप्रपन्नाचार्यजी योगीन्द्र ने ब्रह्मसूत्रानन्द भाष्य की भाष्यदीप टीका लिखि है एवं अन्य "वेदार्थ चन्द्रिका" तथा "तत्वत्रयसिद्धि" प्रभृति अनेक प्रबन्धों में प्रस्थानत्रयानन्दभाष्यकार के रूप में ज. गु. श्रीरामानन्दाचार्यजी को निरूपित किये हैं।

ज. गु. श्रीरामानन्दाचार्य श्रीरामेश्वरानन्दाचार्यजीने ब्रह्मसूत्र गीता एवं उपनिषदों के आनन्दभाष्यों पर तत्वदीप या प्रकाश टीका लिखि हैं तथैव अन्य अनेक दिव्य प्रबंधों में आनन्द भाष्यकार के रूपमें ही आपने आचार्यश्री का निरूपण किया है। समीक्षासम्राट् सर्शन केशरी श्रीवैदेहीकान्तशरणजी के सार्धशताधिक निबन्ध आनन्दभाष्यों के तत्त्वों को प्रकाशित करने

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वाले आचार्यपीठ पत्रिका एवं वैराग्यज्योति से प्रकाशित हो चुके हैं। पीठ पत्रिका में प्रकाशित आपकी भाष्यों की समालोचना विद्वज्जन गम्य है।

अनेक विश्वविद्यालयोंमें वर्षोंसे श्रीरामानन्द वेदान्त दर्शन का पठन-पाठनप्रचलित है उस विषयमें अनेक आचार्योपाधि प्राप्त करके विविधसंस्थाओंमें सेवारत हैं अनेक छात्र विद्यावारीधि उपाधि प्राप्त कर चुके हैं एवं कर रहें हैं तो ऐसी परिस्थिति में किसी पण्डित पुंगव को आचार्यकृतिके विषय में विचिकित्सा होजाय वह भी श्रीरामानन्दीयपने का जामा पहनकर भीक्षाटन प्रसंगमें तो उसका इलाज क्या? "नो लयोन्यवलोकते यदि दिवा सूर्यस्य किं दूषणं।" इससे भी अधिक आश्चर्य की बात तो यह कि उन पण्डितमन्य ने कह डाली कि हम शास्त्र-चर्चा के लिए तैयार हैं। पूर्व उधृत इतने सब व्यक्ति झूठे? एवं ये पं.जी सच्चे "किमाश्चर्यं मतः परम्" तथापि शास्त्र-चर्चा की खुजलाहट हो तो उसमें भी कोई बात नहीं, पर पहले अभिनव वाचस्पति पण्डित सम्राट् स्वामी श्रीवैष्णवा-चार्यजी के "विजयी और अमर आनन्दभाष्य" एवं रामनिष्ठ पं. श्री बजरंगाचार्यजी के "प्रश्नोत्तरमाला तथा प्रश्नावली" का यथातथ्य उत्तर करें जिसका की किसी पण्डितमानी व्यक्ति ने समालोचना या उत्तर करनेका विवेक आजतक प्रदर्शित नहीं किया।

ॐ श्रीमते रामानन्दाय नमः ॐ

श्रीरामानन्द सम्प्रदायकी मूल गद्दी गलता के विनाश को तुरन्त रोका जाये

प्रिय श्री रामानन्दी सन्त एवं वैष्णव भक्त जनों,

यह सर्व विदित है कि उत्तर भारतके प्रसिद्ध गलता तीर्थ में श्रीरामानन्द सम्प्रदाय की प्रथम पीठ (द्वारा गद्दी) श्रीकृष्णदास पयोहारीजी द्वारा स्थापित की गई। श्रीपयोहारीजी महाराज ज.गु. श्रीरामानन्दाचार्यजीकेशिष्य अनन्तानन्दाचार्यजीकेशिष्य थे। गलता से १८ द्वारागद्दी निकली, जो भारत के अनेक प्रान्तों में सम्प्रदाय की भक्ति सरिता को प्रभावित करने लगी। इसी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri Funding: MIDF

कारण साहित्यकारों एवं इतिहास विदों ने इसे उत्तरभारत की रामानन्द सम्प्रदाय की तोताद्री की संज्ञा दी है। दक्षिण में तोताद्री मठ रामानुज सम्प्रदाय का है। गलता में आज भी श्रीपयोहारीजी की गुफा, श्रीसीतारामजी नृत्यगोपालजी एवं हनुमानजी आदि के मन्दिर हैं। गलता की सन्त परम्परा का अवलोकन करें तो स्पष्ट होगा कि यहां के आचार्य रामानन्द सम्प्रदायसे ही रहे हैं जो सभी(विरक्त)निहंग थे। वर्ष १९२९ ईसवी में तत्कालीन महन्त श्रीहरिशरणाचार्य के समय में कुछ लोगों ने मिथ्या प्रचारं किया कि वे रामानुजी हैं तो दिनांक २४।२।२९ को श्रीहरिशरणाचार्य स्वयं काशी गये और श्रीमठ में जाकर इसका खण्डन प्रकाशित करवाकर आये कि हम रामानन्द सम्प्रदाय के ही हैं।

वर्तमान महन्त श्रीरामोदाराचार्य की नियुक्ति भी जयपुर राज्य सरकार द्वारा इसी लिए हुई कि वे श्रीरामानन्द संत परम्परा से दीक्षित थे और संत श्रीभरतदासजी महन्त लोहागढ शाखा के शिष्य थे। लोहागढ गलता की शाखा है। तत् समय कुछ लोगों ने आपत्ति भी उठाई थी कि श्रीरामोदाराचार्य रामानन्द सम्प्रदाय से नहीं है तो वर्तमान महन्तजीने बडे जोर से खण्डन करते हुए स्वीकृति लिखी कि वे रामानन्द सम्प्रदाय के ही हैं। देव स्थान व जागीर कार्यालय में महन्तजो ने समय समय पर यह स्वीकार किया है कि वे रामानन्दी हैं, लेकिन खेद का विषय है कि निजी स्वार्थ के कारण उन्होंने विरक्त जीवन का तो त्याग किया है अब वे गलता के मन्दिरों एवं उनके अधिनस्त समस्त सम्पत्ति को अपनी निजी सम्पति बता कर स्वयं को रामानुजी घोषित कर चुके हैं।

उन्होंने श्रीगंगासहाय बिडला को मिथ्या तथ्य बता कर गलता गद्दी को समाप्त करने के उद्देश्य से हिन्दुस्तान चेरिटेबल ट्रस्ट के साथ समझोता कर लिया है। गलता के विकास के नाम पर वहां के रामानन्द सम्प्रदाय के चिन्हों को मिटा कर रामनुज सम्प्रदाय शिक्षण संस्था बना देने का कार्य आरम्भ कर

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

दिया है। इस सम्बन्ध में जो इकरारनामा महन्त श्रीरामोदराचार्य एवं हिन्दुस्तान चैरिटेबल ट्रस्ट के मध्य हुआ है को देखा जा सकता है। बिडलाजी स्वयं रामानुजी हैं और वे रामानन्द सम्प्रदाय की मूल गद्दी को ही नष्ट कर रहे हैं इस सम्बंध में श्रीगंगासहायजी बिडला को १० जुलाई १९९० को एक विस्तृत पत्र लिख कर गलता की वस्तुस्थिती और इतिहास से अवगत कराया गया था परन्तु धनाभिमानी बिडलाजी ने इस तरफ कोई ध्यान नहीं दिया न कभी उन्होंने ऐसा सोचा कि समस्त भारत का रामानन्द सम्प्रदाय एवं वैष्णवजन इसका घोर विरोध एवं निन्दा करेगा।

गलता में विनाश लीला का क्रम जारी है। भक्त-मालके रचियता संत शिरोमणी नाभाजीका भवन तोड दिया गया है। कुछ संतों की छतरियों से चरणपादुकाएं एवं लेख हटाकर नष्ट किये जा चुके हैं। दीवारों पर चित्रित रामायण के चित्र भी एक दिशा में नष्ट किये जा चुके हैं। अतः निवेदन है कि वर्तमान महन्त एवं श्रीगंगा सहाय बिडला की मिली भगत से होरहे विनाशको तुरंत रुकवानेका आह्वान करें। वर्तमान महन्त समस्त भेष को ही धोखा दे रहे हैं अतः समस्त भारत के रामानंदी सद्गृहस्थ एवं साधु समाज को इसका घोर विरोध करना चाहिये।

राज्य सरकार से अनुरोध है कि गलता मन्दिर एवं इसके अधीनस्थ सम्पत्ति को सरकार जब सरकारी सम्पत्ति मानती है और महन्त को अपने द्वारा नियुक्त व्यक्ति मानती है तो इसके द्वारा इस सम्बन्ध में किये गये इकरारनामे को तुरंत निरस्त करे एक नियुक्ति प्राप्त व्यक्तिको यह अधिकार कैसे हो सकता है कि सरकारी सम्पत्ति के सम्बन्ध में अपने स्तर पर किसी समझोता या इकरार करे?

संतशिरोमणीराजस्थानवैष्णवभूषणश्री १००८ नारायणदासजीमहाराज
त्रिवेणीधाम, शाहपुरा, जयपुर की आज्ञा से
प्रेषक श्रीमहन्त १०८ श्रीसियारामदासजी महाराज
श्रीकनक विहारीजी का मन्दिर; गलतागेट-जयपुर

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

श्रीरामानन्द सम्प्रदाय के

उन्नायकयुगपुरुष

ले० महेन्द्रमणित्रिपाठी, एम. ए.

उत्कर्ष एवं अपकर्ष किसी भी पद पदार्थ या समाज का अनादिकाल से होता आया है यह एक प्रकृति का सामान्य नियम सा है। श्रीरामानन्द सम्प्रदाय भी इस नियम से अपवादित नहीं। मध्यकाल में विदेशी आक्रामकोंसे आक्रमित होकर अपकर्ष का आघात जितना श्रीरामानन्द सम्प्रदाय को सहन करना पडा उतना अन्यों को नहीं। ७ वीं शदी से विदेशियों के आक्रमणों का भोग बना भारत १३ वीं शदी में अवतरित हुए जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्यजीके सर्वतोमुखी सर्वजन ग्राह्य सत्प्रयत्न से उभर कर १७–१८ वीं सदी तक यथाकञ्चित् सुस्थिर हुआ जिसके स्तम्भ रूप श्री बालानन्दाचार्यजी एवं विश्व कवि गोस्वामी श्रीतुलसीदासजी प्रभृति प्रसिद्ध हैं। १८ वीं के अनन्तर पुनः शिथिलता आयी जिसका ह्रासपना २० शदी के पूर्वार्द्ध तक अवलोकित होता है जो यहां तक परिलक्षित होता है कि समाज के कतिपय वर्ग अपने को अन्यानुयायी अनुभव करने लगे थे जिसका परिमार्जन वि० सं० १९४३ में अवतरित श्रीरामानन्द सम्प्रदाय के विशिष्टतम विभूति महामहोपाध्याय जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य रघुवराचार्यजी वेदान्तकेसरीजीने सन् १९२१ के सिंहस्थ उज्जैन पर्व के अवसर पर पूर्ण रूपसे किया। आपने इस कार्य को स्थायित्व प्रदानार्थ एवं समाज को विकशित करने के

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

लिये सन् १९३० में विश्रामद्वारका में जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य पीठ के स्थापना के साथ उसके प्रधान अङ्गभूत श्रीरघुवर संस्कृत महाविद्यालय की स्थापना की जहां से अभिनव वाचस्पति पण्डित सम्राट् स्वामी श्रीउष्णवाचार्यजी महर्षिकल्प स्वामी श्रीरामपदार्थदासजी वेदान्ती व्याख्यानवाचस्पति श्रीईश्वराचार्यजी जगद्गुरुश्रीरामानन्दाचार्य श्रीरामप्रपन्नाचार्यजीयोगिन्द्र जैसे सम्प्रदाय रत्न उद्भूत हुए। जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य श्रीरामेश्वरानन्दाचार्यजी जैसे अनोखे समाज सेवाव्रती व्यक्ति इसी महाविद्यालय रूप खान के विलक्षण रत्न हैं। श्रीवेदान्तीजी ने गीतार्थ चन्द्रिका श्रीरघुवरीय वृत्ति श्रीमन्त्रराज मीमांसा प्रभृति शताधिक दिव्य सत्प्रबन्ध लिखकर सम्प्रदायको समर्पित किये। महामहोपाध्यायजीके सादिक शिष्य पण्डित सम्राट्जीने सिद्धान्तसिन्धु प्रमेय परिशोधनी, मानरत्नावली, विजयी और अमर आनन्दभाष्य प्रभृति द्विशताधिक दिव्य प्रबन्धोंसे श्रीरामानन्द सम्प्रदायकी सेवातिरिक्त वेदान्तपीठ की स्थापना कर सम्प्रदायमें एक अनोखा उदाहरण प्रस्तुत किया जिस गद्दीमें विराजमान महामण्डलेश्वर स्वामी रामावतारदास जी 'रत्न' वेदान्तपीठके उद्देश्य पूर्ति स्वरूप श्रीरामानन्द सम्प्रदायके सर्वतो भावेन अभ्युदय के लिए रत्न के समान चमक रहे हैं।

महामहोपाध्यजी के उत्तराधिकारी पीठाचार्य जगद्गुरु श्री श्रीरामानन्दाचार्य श्रीरामप्रपन्नाचार्यजीने सन् १९६१ में अहमदाबाद में जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य पीठ की स्थापना के साथ श्रीरघुवर रामानन्द वेदान्त महाविद्यालयकी स्थापनाकी जो समाज में निदर्शन रहित है जहां से अनेक छात्र श्रीरानन्द वेदान्त, व्याकरण, साहित्यादि विषयों से स्नातकोत्तर उपाधि प्राप्त कर यत्र तत्र विविध विश्वविद्यालय महाविद्यालयादि में सेवा रत हैं।

आधुनिक प्रणालि के अनुसार वि० वि० आदि संस्थाओं में तत्तद्दर्शन की पठन-पाठन प्रणालि महत्वपूर्ण मानी जाती है

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

तदर्थ १९६५ में स्वनामधन्य कुलपति श्रीसुरतिनारायणमणि त्रिपाठी जी, पण्डितराज श्रीरघुनाथशर्माजी, पण्डितराज श्रीवद्रीनाथशुक्लजी प्रभृतिके विसेष सौजन्यसे दार्शनिक सार्वभौम श्रीवासुदेवाचार्यजी पण्डित सम्राट् स्वामी श्रीवैष्णवाचार्यजी खाकीतडाधीय श्रीमहन्त भगवतदासजी,महामण्लेश्वर स्वामीश्रीनारायणदासजी टीलागाद्याचार्य श्रीमहन्त नारायणदासजी, शास्त्री श्रीत्रिभुवदासजी, श्रीअवधेश दासजीरामायणी, स्वामी श्रीवेंकटेश्वराचार्यजी, स्वामी श्रीरामशोभा-दासजी, जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य रामप्रपन्नाचार्यजी एवं जगद्गुरु स्वामीरामेश्वरानन्दाचार्यजी, श्रीमहन्त रामपदार्थदासजी वेदान्ती, म. श्रीरघुवरगोपालादासजी प्रभृतियों के सत्प्रयत्नों से वाराणसेय सं.वि.वि. में रामानन्द दर्शन का पठन पाठन यथारूप प्रारम्भ हुआ जहां से सैंकडों छात्र शास्त्री आचार्य एवं विद्या वारिधि की उपाधि प्राप्त कर चुके हैं ।

दर्शनकेशरी श्रीरामानन्दाचार्य श्रीरामप्रपन्नाचार्य योगीन्द्रजी ने तत्वत्रय सिद्धि, वेदार्थचन्द्रिका, जैसे मूर्धन्य ग्रन्थोंसे अतिरिक्त अध्यासध्वंशलेश आनन्दभाष्य, व्यधिकरणजागदीशी एवं खण्ड-नोद्धार प्रभृति अनेक ग्रन्थों की टीका लिख कर समाज की अपूर्व सेवा की जिसका पठित वर्ग भूरि–भूरि प्रसंशा कर रहा है ।

श्रीमहामहोपाध्याय एवं श्रीयोगीन्द्रजी के उत्तराधिकारी आचार्य पीठासीन वर्तमान जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य श्रीरामेश्वरा-नन्दाचार्यजी महाराज के संचालकत्व में श्रीरघुवर रामानन्द वेदा-न्त महाविद्यालय एवं रघुवर सं० महाविद्यालय प्रगति पथ पर हैं तो अन्य श्रीरामानन्द दर्शन साहित्यसर्जन सम्बन्धी मठ की प्रवृत्तियां भी दिन दूनीं रात चौगुनी के कहावत को चरितार्थ

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

करते हुए सर्वतोभावेन अप्रसरित होरही है जिनके सत्प्रयत्नसे स्थापित व सञ्चालित श्रीआनन्दभाष्यमुद्रणालयसे सैंकडों श्रीरामानन्द दर्शनकी पुस्तकें प्रकाशित होकर समाजकी सेवामें संलग्न हैं तो अप्रतिद्वन्द्वि रूप से वेदान्त सिद्धान्त के प्रकाशन में रत "जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्यपीठ" मासिक पत्रिका भी पिछले चौदह वर्षों से अपनी सेवामें कोई कोर कसर नहीं रख रही है। समाज के एक मात्र इसी पत्रिका ने भेडिये के खाल में छुपे तथाकथित ज.गु. पदलोलुप या अनिर्वचनीयाद्वैतवादियों के मनसुबों पर पानी फेर दी है। आचार्यपीठ से प्रकाशित होने वाली यही एक मात्र पत्रिका है जो समाज के या पूर्वाचार्यों के ऊपर असम्बद्ध अतथ्यपूर्ण आक्षेपोंके तथ्यपूर्ण करारा जबाव देकर विपक्षियोंके मनसुबोंका पर्दाफासकर समाजको स्वस्थ रख रही है। आनन्दभाष्यसिंहासनासीनजीने श्रुतितात्पर्यबिन्दु, श्रीवैष्णवमतार्ज भास्कर, प्रभाकिरण, तत्वत्रय सिद्धि तत्वद्वीप, वेदार्थचन्द्रिका प्रकाश किरण आनन्दभाष्य प्रकाश, जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य प्रभृति सार्ध शताधिक दिव्य प्रबन्धों से समाज की अभूतपूर्व सेवा की जिनकी लेखनी अभी भी अहर्निश अंगुलियों में ही थिरकती रहती है। आपके ही सत्प्रयत्न से डा० श्रीमण्डन मिश्रजी एवं डा० श्रीमुरलीधर पाण्डेयजीके सहानुभूतिसे राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान नई दिल्ली एवं इससे सम्बद्ध महाविद्यालयों में पिछले कई वर्षोंसे श्रीरामानन्द दर्शनका अध्ययन-अध्यापन हो रहा हैं जहाँ से कई छात्र स्नातकोत्तरोपाधि प्राप्त कर चुके हैं। इस प्रकार श्रीरामानन्द वेदान्त दर्शन का दिव्य प्रकाश विश्व में फैलाकर निस्वार्थ एवं निरभिमानी सेवाभावी इन पुरुषोंने समाज की अनोखी सेवा के साथ विशेष उदाहरण प्रस्तुत किया है जो सभी श्रीसम्प्रदायाभिमानीयों के लिये अनुकरणीय है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

धर्मक्षेत्रे श्रीसरयूतीर्थ रामजीमन्दिर में श्रीमहन्ताई एवं भव्यतम वैष्णवाराधन

कर्णावती नगर के सुप्रसिद्ध गोसन्त सेवी स्थान श्रीसरयूतीर्थ श्रीरामजी मन्दिर में साकेतवासी श्रीमहन्त महामण्डलेश्वर स्वामी श्रीरामशरणदासजी महाराज की वार्षिक पुण्य तिथि के अवसर पर ता. ८।१०।९२। को कर्णावती नगरके करीब सभी वैष्णव महन्त मण्लेश्वोंके बीच एक भव्य वैष्णवराधनका आयोजन कियागया।

जिसमें अहमदाबाद (कर्णावती)के करीब सभीतडों के संत महंत महामण्डलेश्वरोंके अलावा विश्व विख्यात तात्रिक श्रीचन्द्र स्वामीजी,श्रीम, रामकृष्णदासजी महात्यागी दिल्ली म.श्रीमहाबीरदासजी शास्त्री बिहार, श्रीम.रमाकान्तदासजी भीलवाडा, श्रीम. जगदीश. दासजी गढडा, श्रीललीतशरणजी मीठीवडी, श्रीम. रघुनाथदासजी भावनगर, श्रीप्रभुदासजी अयोध्या, आदि महानुभाव पधारे।

इस अवसर पर श्रीपंच खाकीतड के श्रीमहंत प्रेमदासजी महारा रामायणीजी ने तड के सदस्यों की बहुमती से प्रस्ताव पारित कर श्रीपंच खाखीतड की श्रीमहंताई पद पर स्वामी श्री शिवरामदासजी महाराज को सुशोभित कर प्रथम चादर प्रदान की तत् पश्चात् अन्य आमंत्रित संत महन्तोंने इस शुभ कार्य में सहमति प्रदान करते हुए श्रीमहंत स्वामी श्रीशिवरामदासजी को चादर भेंट पुष्पादि से स्वागत किया।

श्रीमहंत प्रेमदासजी महाराज गोसेवा, सामाजिक कार्य, धर्म प्रचारार्थ विदेश प्रवास में व्यस्तता के कारण अपने ही सम्प्रदाय के अत्यन्त होनहार कार्यनिष्ठ, सम्प्रदायनिष्ठ हिन्दुत्ववादी वीरवैष्णव श्रीमहन्त स्वामी श्रीशिवरामदासजी महाराज को श्रीमहन्ताई प्रदान कर एक अनुपम उदाहरण प्रस्तुत किया है कि संकुचित विचारधारा को छोडकर हमारे धर्मस्थानों के पदों की न्यायिक पूर्ति हो तो सम्प्रदाय अत्यन्त ही अल्प समय में और भी उन्नति के मार्ग पर अग्रसर होगा।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

ज्ञातव्य है, श्रीरामानन्द विरक्त वैष्णव मण्डल के प्रधान अध्यक्ष एवं श्रीपंच खाखी तड के श्रीमहंत स्वामी श्रीशिवरामदासजी महाराज अपने स्वयं के परिश्रम से श्रीकाकरिया हनुमान मंदिर, सोला, श्रीरामशरणदासजी महाराज गोशाला कुजाड श्रीरामानन्दकोट कांकरिया एवं स्वयं के गुरु स्थान श्रीसरयूतीर्थ मन्दिर का कार्य भार सभालते ही इन स्थानों की कायाकल्प करदी, इसके उपरांत भी आप कई धार्मिक सामाजिक संस्थाओं के ट्रस्टी, मंत्री, अध्यक्ष आदिपर सफलतापूर्वक कार्य कर रहे हैं संप्रदाय को आपसे बहुत आशाऐं हैं। अस्तु।

वेदांतपीठ में वैष्णवाराधन

तीन देवडी मन्दिर वेदान्तपीठ कर्णावतीमें ता. २०।९।९२ रविवार को पण्डितसम्राट् स्वामी श्रीवैष्णवाचार्यजी महाराज का श्राद्ध श्रद्धा के साथ सम्पन्न हुआ।

इसी समय पण्डितसम्राट् स्वामी श्रीवैष्णवाचार्यजी महाराज पुस्तकालय का भी उद्घाटन ज.गु. श्रीरामानन्दाचार्य आनन्दभाष्यसिंहासनासीन श्रीस्वामी रामेश्वरानन्दाचार्यजी महाराज के तत्वावधान में सम्पन्न हुआ। कर्णावती नगर एवं बाहर से भी विषेश मात्रामें सन्तमहन्त महामण्डलेश्वर आमन्त्रित किये गये।

श्रीरामजी मन्दिर मणीनगर में वैष्णवाराधन

दि० २१।९।९२ सोमवार को म. श्री पण्डित श्रीवेंकटेश्वराचार्यजी महाराज का श्राद्ध श्रीरामजी मंदिर मणीनगर में आमन्त्रित सन्त महन्तों के सानिध्य में मनाया गया। महान्त मालतीदासजीने यथोचित सत्कार किया एवं श्रीरामानन्द वेदान्तको सहायता प्रदान की

श्री त्र्यंबक बाबा हनुमान बाटिका पालीताना विरक्तमंडलका समाराधन

महन्तश्री नारायणदासजी की पुण्य स्मृति में आपके सुयोग्य शिष्य श्रीद्वारकादासजी महाराजने अपने स्वस्थान पालीताणाके

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पास घेरीरोड स्थित श्रीत्र्यंबकबाब श्रीहनुमाय वाटिकामें पालीताणा विरक्तवैष्णव मण्डलका आराधन का आयोजन किया। मण्डल के सन्त महन्तों के अभावा कर्णावती से श्रीरामानन्द विरक्त वैष्णव मण्डल के श्रीमहन्त स्वामी श्रीशिवरामदासजी, महामन्त्री श्रीरामावतारदासजी (रत्न) स्वामी श्रीसियारामदासजी महाराज, जूनागढ से श्रीम. गोपालानन्दजी, श्रीम. रामलखनदासजी आदि एवं गुजरात, सौराष्ट्र के कई प्रतिष्ठित सन्त महन्तों ने इस आयोजन में भाग लिया।

स्वसम्प्रदायनिष्ठ मण्डलके श्रीमहन्त स्वामी श्रीलक्ष्मणदासजी बापू की सूचना एवं व्यवस्था के अनुसार सभी का यथोचित स्वागत सत्कार हुआ।

श्रीद्वारकादासजी महाराज को श्रीपालीवाणा विरक्त मण्डलकी तरफ से स्थान की महन्ताई पद प्रदान की गई।

ज्ञातव्य है श्रीम. लक्ष्मणदासजी श्रीसम्प्रदायनिष्ठ श्रीमंहत हैं। आपके द्वारा इस इलाके में हमेशा ही विशाल धार्मिक सम्मेलन होते रहते हैं। सम्प्रदाय को आपसे वहुत आशायें हैं।

अनारा ग्राम में वैष्णवाराधन

कपडवंज तालुका के अनारा ग्राममें श्रीरणछोडजी मन्दिर के महन्त श्रीप्रेमदासजी महाराज के साकेतवास के निमित्त वडौदरा विरक्त मण्डल का समाराधन दि० २५।११।९२। को सानंद सम्पन्न हुआ। मण्डल द्वारा श्रीवालमुकुन्ददासजी महाराज को स्थान की चादर विधि से सम्मानित किया गया।

इस अवसर पर विशेष आमंत्रण पर अनेक सन्त महन्त उपस्थित हुए। श्रीरामानन्द वेदान्त को सहायता प्रदान की गई। तदर्थ धन्यवाद।

श्रद्धांजली

श्रीरामानन्द सम्प्रदाय के विशिष्ट विद्वान् स्वतन्त्रता सेनानी स्वामी श्रीमाधवाचार्यजी का श्रीसाकेत प्रस्थान का समाचार दि० १७।११।९२ को जगद् गुरु श्रीरामानन्दाचार्य पीठ अहमदावाद में प्राप्त हुआ। समाचार प्राप्त होते ही आनन्दभाष्यसिंहासनासीन जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्यजीके सान्निध्यमें श्रीरघुवर रामानन्द वेदान्त महाविद्यालय के अध्यापकों, छात्रों, वेदान्तपीठाधीश महामण्डलेश्वर स्वामी श्रीरामावतारदासजी (रत्न) एवं आचार्यपीठ के विशिष्ट सेवकोंकी श्रद्धांजली सभा हुई। प्रासंगिक चर्चा के अनन्तर श्रीसाकेत प्रस्थित आत्माके उद्देश्यसे सर्वेश्वर श्रीसीताराम जीकी प्रार्थनाकर उन्हें नित्य पार्षदत्व प्रदान करनेकी कामनाकी गयी।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अर्वाची सुभगे ! भव सीते ! वन्दामहे त्वा ।
यथा नः सुभगाऽससि यथा नः सुफलाऽससि३४।

ऋ. ४।५७।६

दीपिका-हल के द्वारा कर्षण से उत्पन्न होने पर देवगण श्रीसीताजी की स्तुति करते हैं—उत्तम ऐश्वर्य देनेवाली तथा असुरों का अन्त करनेवाली एवं हलके द्वारा कर्षण से पृथिवीसे प्रकटित हे श्रीसीते ! हम देवगण आपको प्रणाम करते हैं । जिससे हम लोगों को उत्तम ऐश्वर्य देकर तथा असुरों का नाशरूप प्रयोजन सिद्ध कर आप शोभित हों ।।३४।।

जगद्गुरु श्रीरा .न्दाचार्य श्रीयोगिराजजी

श्रीरामानन्दाचार्यपीठश्रीशेषमठके धर्मप्रच .वभागसेधर्मप्रचारार्थप्रकाशित
मुद्रक—श्रीआनन्दभाष .द्रणालय
आचार्यपी
श्रीकोसलेन्द्रमठ पो. पालड़ी, अहमदावाद-३८०००७

पा. सं. प्रति श्री.....

पुस्तकालय वाल्मीकि अध्ययन संस्थान काठमाण्डू नेपाल

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu